CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

10 वर्ष (2016-2025)

अध्यायवार

इतिहास

आईएएस मुख्य परीक्षा प्रश्नोत्तर रूप में

हल प्रश्न-पत्र

10 वर्ष (2016-2025)

अध्यायवार

इतिहास

आईएएस मुख्य परीक्षा प्रश्नोत्तर रूप में

हल प्रश्न-पत्र

यह पुस्तक संघ लोक सेवा आयोग की सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के वैकल्पिक विषय के साथ-साथ राज्य लोक सेवा आयोगों की मुख्य परीक्षाओं तथा अन्य समकक्ष प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु भी समान रूप से उपयोगी है।

संपादकः एन. एन. ओझा

हलः क्रॉनिकल संपादकीय समूह

CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

अनुक्रमणिका

प्रथम प्रश्न-पत्र

- **मानचित्र 1-25**

1. **स्रोत 26-28**

पुरातात्विक स्रोत:
- ❖ अन्वेषण, उत्खनन, पुरालेखविद्या, मुद्राशस्त्र, स्मारक

साहित्यिक स्रोत:
- ❖ स्वदेशी: प्राथमिक एवं द्वितीयक; कविता, विज्ञान साहित्य, क्षेत्रीय भाषाओं का साहित्य, धार्मिक साहित्य।
- ❖ विदेशी वर्णन: यूनानी, चीनी एवं अरब लेखक

2. **प्रागैतिहास एवं आद्य इतिहास.........................29-30**
- ❖ भौगोलिक कारक, शिकार एवं संग्रहण (पुरापाषाण एवं मध्यपाषाण युग), कृषि का आरंभ (नवपाषाण एवं ताम्रपाषाण युग)।

3. **सिंधु घाटी सभ्यता 31-36**
- ❖ उद्गम, काल, विस्तार, विशेषताएं, पतन, अस्तित्व एवं महत्व, कला एवं स्थापत्य।

4. **महापाषाणयुगीन संस्कृतियां 37-38**
- ❖ सिंधु से बाहर पशुचारण एवं कृषि संस्कृतियों का विस्तार, सामुदायिक जीवन का विकास, बस्तियां, कृषि का विकास, शिल्पकर्म, मृदभांड एवं लौह उद्योग।

5. **आर्य एवं वैदिक काल 39-44**
- ❖ भारत में आर्यों का प्रसार।
- ❖ वैदिक काल: धार्मिक एवं दार्शनिक साहित्य; ऋगवैदिक काल से उत्तर वैदिक काल तक हुए रूपांतरण; राजनैतिक; सामाजिक एवं आर्थिक जीवन; वैदिक युग का महत्व; राजतंत्र एवं वर्ग व्यवस्था का क्रम विकास।

6. **महाजनपद काल...45-48**
- ❖ महाजनपदों का निर्माण : गणतंत्रीय एवं राजतंत्रीय; नगर केंद्रों का उद्भव, व्यापार मार्ग, आर्थिक विकास, टंकण, जैन एवं बौद्ध धर्म का प्रसार, मगध एवं नंदों का उद्भव।
- ❖ ईरानी एवं मकदूनियाई आक्रमण एवं उनके प्रभाव।

7. **मौर्य साम्राज्य..49-57**
- ❖ मौर्य साम्राज्य की नींव, चंद्रगुप्त, कौटिल्य और अर्थशास्त्र; अशोक; धर्म की संकल्पना; धर्मादेश; राज व्यवस्था; प्रशासन; अर्थव्यवस्था; कला, स्थापत्य एवं मूर्तिशिल्प; विदेशी संपर्क, धर्म, धर्म का प्रसार; साहित्य, साम्राज्य का विघटन; शुंग एवं कण्व।

8. **उत्तर मौर्य काल (भारत-यूनानी, शक, कुषाण, पश्चिमी क्षत्रप)...58-64**
- ❖ बाहरी विश्व से संपर्क; नगर-केंद्रों का विकास, अर्थ-व्यवस्था, टंकण, धर्मों का विकास, महायान, सामाजिक दशाएं, कला, स्थापत्य, संस्कृति, साहित्य एवं विज्ञान।

9. **प्रारंभिक राज्य एवं समाज; पूर्वी भारत, दकन एवं दक्षिण भारत में 65-67**
- ❖ खारवेल, सातवाहन, संगमकालीन तमिल राज्य; प्रशासन, अर्थव्यवस्था, भूमि-अनुदान, टंकण, व्यापारिक श्रेणियां एवं नगर केंद्र; संगम साहित्य एवं संस्कृति, कला एवं स्थापत्य।

10. **गुप्त वंश, वाकाटक एवं वर्द्धन वंश................68-73**
- ❖ राज्य व्यवस्था एवं प्रशासन, आर्थिक दशाएं, गुप्तकालीन टंकण, भूमि, अनुदान, नगर केंद्रों का पतन, भारतीय सामंतशाही, जाति प्रथा, स्त्री की स्थिति, शिक्षा एवं शैक्षिक संस्थाएं, नालंदा, विक्रमशिला एवं बल्लभी, साहित्य, विज्ञान-साहित्य, कला एवं स्थापत्य।

11. **गुप्तकालीन क्षेत्रीय राज्य..................................74-78**
- ❖ कदंब वंश, पल्लव वंश, बादामी का चालुक्यवंश; राज व्यवस्था एवं प्रशासन, व्यापारिक श्रेणियां, साहित्य; वैष्णव एवं शैल धर्मों का विकास, तमिल भक्ति आंदोलन, शंकराचार्य; वेदांत; मंदिर संस्थाएं एवं मंदिर स्थापत्य; पाल वंश, सेन वंश, राष्ट्रकूट वंश, परमार वंश, राज व्यवस्था एवं प्रशासन, सांस्कृतिक पक्ष, सिंध के अरब विजेता; अलबरूनी, कल्याण का चालुक्य वंश, चोल वंश; होयशल वंश, पांड्य वंश, राज व्यवस्था एवं प्रशासन; स्थानीय शासन; कला एवं स्थापत्य का विकास, धार्मिक संप्रदाय; मंदिर एवं मठ संस्थाएं; अग्रहार वंश, शिक्षा एवं साहित्य; अर्थव्यवस्था एवं समाज।

12. **प्रारंभिक भारतीय सांस्कृतिक इतिहास के प्रतिपाद्य 79-83**
- ❖ भाषाएं एवं मूलग्रंथ, कला एवं स्थापत्य के क्रम विकास के प्रमुख चरण, प्रमुख दार्शनिक चिंतक एवं शाखाएं, विज्ञान एवं गणित के क्षेत्र के विचार।

13. **प्रारंभिक मध्यकालीन भारत, 750-1200..........84-89**
- ❖ राज व्यवस्था: उत्तरी भारत एवं प्रायद्वीप में प्रमुख राजनैतिक घटनाक्रम, राजपूतों का उद्गम एवं उदय।
- ❖ चोल वंश : प्रशासन, ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं समाज
- ❖ भारतीय सामंतशाही
- ❖ कृषि अर्थव्यवस्था एवं नगरीय बस्तियां
- ❖ व्यापार एवं वाणिज्य

❖ समाजः ब्राह्मण की स्थिति एवं नई सामाजिक व्यवस्था स्त्रियों की स्थिति
❖ भारतीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

14. भारत की सांस्कृतिक परंपरा, 750-1200.........90-98
❖ दर्शन: शंकराचार्य एवं वेदांत, रामानुज एवं विशिष्टाद्वैत, मध्य एवं ब्रह्म-मीमांसा।
❖ धर्म: धर्म के स्वरूप एवं विशेषताएं, तमिल भक्ति, संप्रदाय, भक्ति का विकास, इस्लाम एवं भारत में इसका आगमन, सूफी मत।
❖ साहित्यः संस्कृत साहित्य, तमिल साहित्य का विकास, नवविकासशील भाषाओं का साहित्य, कल्हण की राजतरंगिणी, अलबरूनी का इंडिया।
❖ कला एवं स्थापत्य : मंदिर स्थापत्य, मूर्तिशिल्प, चित्रकला।

15. तेरहवीं शताब्दी..99-102
❖ दिल्ली सल्तनत की स्थापना : गोरी के आक्रमण, गोरी की सफलता के पीछे कारक
❖ आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिणाम
❖ दिल्ली सल्तनत की स्थापना एवं प्रारंभिक तुर्क सुल्तान
❖ सुदृढ़ीकरण : इल्तुतमिश और बलबन का शासन।

16. चौदहवीं शताब्दी....................................... 103-109
❖ खिलजी क्रांति।
❖ अलाउद्दीन खिलजी: विज्ञान एवं क्षेत्र-प्रसार, कृषि एवं आर्थिक उपाय।
❖ मुहम्मद तुगलकः प्रमुख प्रकल्प, कृषि उपाय, मुहम्मद तुलगक की अफसरशाही।
❖ फिरोज तुगलक : कृषि उपाय, सिविल इंजीनियरी एवं लोक निर्माण में उपलब्धियां, दिल्ली।
❖ सल्तनत का पतन, विदेशी संपर्क एवं इब्नबतूता का वर्णन।

17. तेरहवीं एवं चौदहवीं शताब्दी का समाज, संस्कृति एवं अर्थव्यवस्था....................................... 110-119
❖ समाज: ग्रामीण समाज की रचना; शासी वर्ग, नगर निवासी, स्त्री, धार्मिक वर्ग, सल्तनत के अंतर्गत जाति एवं दास प्रथा; भक्ति आंदोलन, सूफी आंदोलन।
❖ संस्कृति : फारसी साहित्य, उत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं का साहित्य; दक्षिण भारत की भाषाओं का साहित्य; सल्तनत स्थापत्य एवं नए स्थापत्य रूप, चित्रकला, सम्मिश्र संस्कृति का विकास।
❖ अर्थव्यवस्था: कृषि उत्पादन, नगरीय अर्थव्यवस्था एवं कृषितर उत्पादन का उद्भव, व्यापार एवं वाणिज्य।

18. पंद्रहवीं एवं प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी-राजनैतिक घटनाक्रम एवं अर्थव्यवस्था........................ 120-123
❖ प्रांतीय राजवंशों का उदयः बंगाल, कश्मीर (जैनुल आबदीन), गुजरात, मालवा, बहमनी।
❖ विजयनगर साम्राज्य।
❖ लोदीवंश।
❖ मुगल साम्राज्य, पहला चरण, बाबर एवं हुमायूँ।

19. पंद्रहवीं एवं प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी : समाज एवं संस्कृति.. 124-127
❖ क्षेत्रीय सांस्कृतिक विशिष्टताएं।
❖ साहित्यिक परंपराएं।
❖ प्रांतीय स्थापत्य।
❖ विजयनगर साम्राज्य का समाज; संस्कृति, साहित्य और कला।

20. अकबर... 128-132
❖ विजय एवं साम्राज्य का सुदृढ़ीकरण।
❖ जागीर एवं मनसब व्यवस्था की स्थापना।
❖ राजपूत नीति।
❖ धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण का विकास, सुलह-ए-कुल का सिद्धांत एवं धार्मिक नीति।
❖ कला एवं प्रौद्योगिकी को राज-दरबारी संरक्षण।

21. सत्रहवीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य............. 133-142
❖ जहांगीर, शाहजहां एवं औरंगजेब की प्रमुख प्रशासनिक नीतियां
❖ साम्राज्य एवं जमींदार
❖ जहांगीर, शाहजहां एवं औरंगजेब की धार्मिक नीतियां
❖ मुगल राज्य का स्वरूप
❖ उत्तर सत्रहवीं शताब्दी का संकट का विद्रोह
❖ अहोम साम्राज्य
❖ शिवाजी एवं प्रारंभिक मराठा राज्य

22. सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दी में अर्थव्यवस्था एवं समाज.. 143-150
❖ जनसंख्या, कृषि उत्पादन, शिल्प उत्पादन
❖ नगर, डच, अंग्रेजी एवं फ्रांसीसी कंपनियों के माध्यम से यूरोप के साथ वाणिज्य, व्यापार क्रांति
❖ भारतीय व्यापारिक वर्ग, बैंकिंग, बीमा एवं ऋण प्रणालियां
❖ किसानों की दशा, स्त्रियों की दशा
❖ सिख समुदाय एवं खालसा पंथ का विकास

23. मुगल साम्राज्यकालीन संस्कृति.................... 151-160
❖ फारसी इतिहास एवं अन्य साहित्य
❖ हिंदी एवं अन्य धार्मिक साहित्य
❖ मुगल स्थापत्य
❖ मुगल चित्रकला
❖ प्रांतीय स्थापत्य एवं चित्रकला
❖ शास्त्रीय संगीत
❖ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

24. अठारहवीं शताब्दी.................................... 161-170
❖ मुगल साम्राज्य के पतन के कारक
❖ क्षेत्रीय सामंत देश, निजाम का दकन, बंगाल अवध
❖ पेशवा के अधीन मराठा उत्कर्ष,
❖ मराठा राजकोषीय एवं वित्तीय व्यवस्था
❖ अफगान शक्ति का उदय, पानीपत का युद्ध-1761
❖ ब्रिटिश विजय की पूर्व संध्या में राजनीति, संस्कृति एवं अर्थव्यवस्था की स्थिति

द्वितीय प्रश्न-पत्र

1. भारत में यूरोप का प्रवेश........................... 171-176

- प्रारंभिक यूरोपीय बस्तियां; पुर्तगाली एवं डच, अंग्रेजी एवं फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कंपनियां; आधिपत्य के लिए उनके युद्ध; बंगाल-अंग्रेजों एवं बंगाल के नवाब के बीच संपर्क, सिराज और अंग्रेज; प्लासी का युद्ध; प्लासी का महत्व।

2. भारत में ब्रिटिश प्रसार 177-182

- बंगाल-मीर जाफर एवं मीर कासिम, बक्सर युद्ध; मैसूर, मराठा; तीन अंग्रेज-मराठा युद्ध; पंजाब

3. ब्रिटिश राज्य की प्रारंभिक संरचना............ 183-184

- प्रारंभिक प्रशासनिक संरचना; द्वैधशासन से प्रत्यक्ष नियंत्रण तक; रेगुलेटिंग एक्ट (1773); पिट्स इंडिया एक्ट (1784); चार्टर एक्ट (1833); मुक्त व्यापार का स्वर एवं ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का बदलता स्वरूप; अंग्रेजी उपयोगितावादी और भारत।

4. ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का आर्थिक प्रभाव.. 185-196

क) ब्रिटिश भारत में भूमि- राजस्व, बंदोबस्त; स्थायी बंदोबस्त; रैयतवारी बंदोबस्त; महलबारी बंदोबस्त; राजस्व प्रबंध का आर्थिक प्रभाव; कृषि का वाणिज्यीकरण; भूमिहीन कृषि श्रमिकों का उदय; ग्रामीण समाज का परिक्षीणन।

ख) पारंपरिक व्यापार एवं वाणिज्य का विस्थापन; अनौद्योगीकरण; पारंपरिक शिल्प की अवनति; धन का अपवाह; भारत का आर्थिक रूपांतरण; टेलीग्राफ एवं डाक सेवाओं समेत रेल पथ एवं संचार जाल; ग्रामीण भीतरी प्रदेश में दुर्भिक्ष एवं गरीबी; यूरोपीय व्यापार उद्यम एवं इसकी सीमाएं।

5. सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास 197-200

- स्वदेशी शिक्षा की स्थिति; इसका विस्थापन; प्राच्चविद्-आंग्लविद् विवाद, भारत में पश्चिमी शिक्षा का प्रादुर्भाव; प्रेस, साहित्य एवं लोकमत का उदय; आधुनिक मातृभाषा साहित्य का उदय; विज्ञान की प्रगति; भारत में क्रिश्चियन मिशनरी के कार्यकलाप।

6. बंगाल एवं अन्य क्षेत्रों में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलन 201-209

- राममोहन राय, ब्रह्म आंदोलन; देवेन्द्रनाथ टैगोर; ईश्वरचंद्र विद्यासागर; युवा बंगाल आंदोलन; दयानंद सरस्वती; भारत में सती, विधवा विवाह, बाल विवाह आदि समेत सामाजिक सुधार आंदोलन; आधुनिक भारत के विकास में भारतीय पुनर्जागरण का योगदान; इस्लामी पुनरुद्धारवृत्ति-फराइजी एवं वहाबी आंदोलन।

7. ब्रिटिश शासन के प्रति भारत की अनुक्रिया:.. 210-215

- रंगपुर ढींग (1783), कोल विद्रोह (1832), मालाबार में मोपला विद्रोह (1841-1920), सन्थाल हुल (1855), नील विद्रोह (1859-60), दकन विप्लव (1875) एवं मुंडा उल्गुलान (1899-1900) समेत 18वीं एवं 19वीं शताब्दी में हुए किसान आंदोलन एवं जनजातीय विप्लव; 1857 का महाविद्रोह-उद्गम, स्वरूप, असफलता के कारण, परिणाम; पश्च 1857 काल में किसान विप्लव के स्वरूप में बदलाव; 1920 और 1930 के दशकों में हुए किसान आंदोलन।

8. भारतीय राष्ट्रवाद के जन्म के कारक......... 216-228

- संघों की राजनीति; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की बुनियाद; कांग्रेस के जन्म के संबंध में सेफ्टी वाल्व का पक्ष; प्रारंभिक कांग्रेस के कार्यक्रम एवं लक्ष्य; प्रारंभिक कांग्रेस नेतृत्व की सामाजिक रचना; नरम दल एवं गरम दल; बंगाल का विभाजन (1905), बंगाल में स्वदेशी आंदोलन; स्वदेशी आंदोलन के आर्थिक एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य; भारत में क्रांतिकारी उग्रपंथ का आरंभ।

9. गांधी का उदय... 229-234

- गांधी के राष्ट्रवाद का स्वरूप; गांधी का जनाकर्षण; रोलेट सत्याग्रह; खिलाफत आंदोलन; असहयोग आंदोलन समाप्त होने के बाद में सविनय अवज्ञा आंदोलन के प्रारंभ होने तक की राष्ट्रीय राजनीति; सविनय अवज्ञा आंदोलन के दो चरण; साइमन कमीशन; नेहरू रिपोर्ट; गोलमेज परिषद्, राष्ट्रवाद और किसान आंदोलन; राष्ट्रवाद एवं श्रमिक वर्ग आंदोलन; महिला एवं भारतीय युवा और भारतीय राजनीति में छात्र (1885-1947); 1937 का चुनाव तथा मंत्रालयों का गठन; क्रिप्स मिशन; भारत छोड़ो आंदोलन; वैवेल योजना; कैबिनेट मिशन

10. औपनिवेशिक भारत में संवैधानिक विकास......235-237

- 1858 और 1935 के मध्य।

11. राष्ट्रीय आंदोलन की अन्य कड़ियां 238-241

- क्रांतिकारी; बंगाल, पंजाब, महाराष्ट्र, यू.पी., मद्रास प्रदेश, भारत से बाहर, वामपंथ; कांग्रेस के अंदर का वाम पक्ष; जवाहर लाल नेहरू, सुभाष चंद्र बोस, कांग्रेस समाजवादी पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, अन्य वामदल।

12. अलगाववाद की राजनीति..................................242

- मुस्लिम लीग; हिन्दू महासभा; सांप्रदायिकता एवं विभाजन की राजनीति; सत्ता का हस्तांतरण; स्वतंत्रता।

13. एक राष्ट्र के रूप में सुदृढ़ीकरण 243-249

- नेहरू की विदेश नीति; भारत और उसके पड़ोसी (1947-1964); राज्यों का भाषावाद पुनर्गठन (1935-1947); क्षेत्रीयतावाद एवं क्षेत्रीय असमानता; भारतीय रियासतों का एकीकरण; निर्वाचन की राजनीति में रियासतों के नरेश (प्रिंस); राष्ट्रीय भाषा का प्रश्न।

14. **1947 के बाद जाति एवं नृजातित्व............ 250–251**
- उत्तर-औपनिवेशिक निर्वाचन-राजनीति में पिछड़ी जातियां एवं जनजातियां; दलित आंदोलन।

15. **आर्थिक विकास एवं राजनैतिक परिवर्तन... 252–255**
- भूमि सुधार; योजना एवं ग्रामीण पुनर्रचना की राजनीति; उत्तर औपनिवेशिक भारत में पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण नीति; विज्ञान की तरक्की।

16. **प्रबोध एवं आधुनिक विचार 256–264**
(i) प्रबोध के प्रमुख विचार; कांट, रूसो
(ii) उपनिवेशों में प्रबोध – प्रसार
(iii) समाजवादी विचारों का उदय (मार्क्स तक); मार्क्स के समाजवाद का प्रसार

17. **आधुनिक राजनीति के मूल स्त्रोत................ 265–273**
(i) यूरोपीय राज्य प्रणाली
(ii) अमेरिकी क्रांति एवं संविधान
(iii) फ्रांसीसी क्रांति एवं उसके परिणाम, 1789–1815
(iv) अब्राहम लिंकन के संदर्भ के साथ अमेरिकी सिविल युद्ध एवं दासता का उन्मूलन।
(v) ब्रिटिश गणतंत्रात्मक राजनीति, 1815–1850; संसदीय सुधार, मुक्त व्यापारी, चार्टरवादी।

18. **औद्योगीकरण.. 274–281**
(i) अंग्रेजी औद्योगिकी क्रांति: कारण एवं समाज पर प्रभाव
(ii) अन्य देशों में औद्योगीकरण; यू.एस.ए., जर्मनी, रूस, जापान
(iii) औद्योगीकरण एवं भूमंडलीकरण

19. **राष्ट्र राज्य प्रणाली.................................... 282–290**
(i) 19वीं शताब्दी में राष्ट्रवाद का उदय
(ii) राष्ट्रवाद: जर्मनी और इटली में राज्य निर्माण
(iii) पूरे विश्व में राष्ट्रीयता के आविर्भाव के समक्ष साम्राज्यों का विघटन

20. **साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद 291–298**
(i) दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व एशिया
(ii) लातीनी अमरीका एवं दक्षिण अफ्रीका
(iii) ऑस्ट्रेलिया
(iv) साम्राज्यवाद एवं मुक्त व्यापार: नव साम्राज्यवाद का उदय

21. **क्रांति एवं प्रतिक्रांति.................................. 299–311**
(i) 19वीं शताब्दी यूरोपीय क्रांतियां
(ii) 1917–1921 की रूसी क्रांति
(iii) फासीवाद प्रतिक्रांति, इटली एवं जर्मनी
(iv) 1949 की चीनी क्रांति

22. **विश्व युद्ध 312–316**
(i) संपूर्ण युद्ध के रूप में प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध: समाजीय निहितार्थ
(ii) प्रथम विश्व युद्ध : कारण एवं परिणाम
(iii) द्वितीय विश्व युद्ध : कारण एवं परिणाम

23. **द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का विश्व 317–328**
(i) दो शक्तियों का आविर्भाव
(ii) तृतीय विश्व एवं गुटनिरपेक्षता का आविर्भाव
(iii) संयुक्त राष्ट्र संघ एवं वैश्विक विवाद

24. **औपनिवेशिक शासन से मुक्ति.................. 329–337**
(i) लातीनी अमरीका-बोलीवी
(ii) अरब विश्व-मिस्र
(iii) अफ्रीका-रंगभेद से गणतंत्र तक
(iv) दक्षिण पूर्व एशिया-वियतनाम

25. **वि-औपनिवेशीकरण एवं अल्पविकास 338–342**
विकास के बाधक कारक : लातीनी अमरीका, अफ्रीका

26. **यूरोप का एकीकरण................................. 343–345**
(i) युद्धोत्तर स्थापनाएं; NATO एवं यूरोपीय समुदाय (यूरोपियन कम्युनिटी)
(ii) यूरोपीय समुदाय (यूरोपियन कम्युनिटी) का सुदृढ़ीकरण एवं प्रसार
(iii) यूरोपीय संघ

27. **सोवियत यूनियन का विघटन एवं एक ध्रुवीय विश्व का उदय.. 346–350**
(i) सोवियत साम्यवाद एवं सोवियत यूनियन को निपात (पतन) तक पहुंचाने वाले कारक, 1985–1991
(ii) पूर्वी यूरोप में राजनैतिक परिवर्तन 1989–2001
(iii) शीत युद्ध का अंत एवं अकेली महाशक्ति के रूप में US का उत्कर्ष

प्रथम प्रश्न-पत्र

मानचित्र

प्रश्नः आपको दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्नलिखित स्थानों की पहचान कीजिए एवं अपनी प्रश्न-सह- उत्तर पुस्तिका में उनमें से प्रत्येक पर लगभग 30 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। मानचित्र पर अंकित प्रत्येक स्थान के लिए स्थान निर्धारण संकेत क्रमानुसार नीचे दिए गए हैं:

(i) नवपाषाणिक स्थाल
(ii) मध्यपाषाणिक स्थल
(iii) पुरापाषाणिक स्थल
(iv) प्रस्तर कलाकृति युक्त नवपाषाणिक स्थल
(v) सिंधु घाटी सभ्यता स्थल
(vi) अग्निकुण्ड युक्त प्रारंभिक हड़प्पीय स्थल
(vii) उत्तर हड़प्पीय स्थल
(viii) गेरुए रंग के मृद्भांड (OCP) स्थल
(xi) मध्यपाषाणिक स्थल
(x) महापाषाणिक स्थल
(xi) दक्षिण भारत का महाजनपद
(xii) बुद्ध का महापरिनिर्वाण स्थल
(xiii) अशोक का प्रमुख शिलालेख
(xvi) अशोक का लघु शिलालेख
(xv) मौर्यों का व्यापारिक केन्द्र
(xvi) शक-कुषाण सिक्कों का जखीरा
(xvii) अश्वमेघ यज्ञ वर्णित एक अभिलेख

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

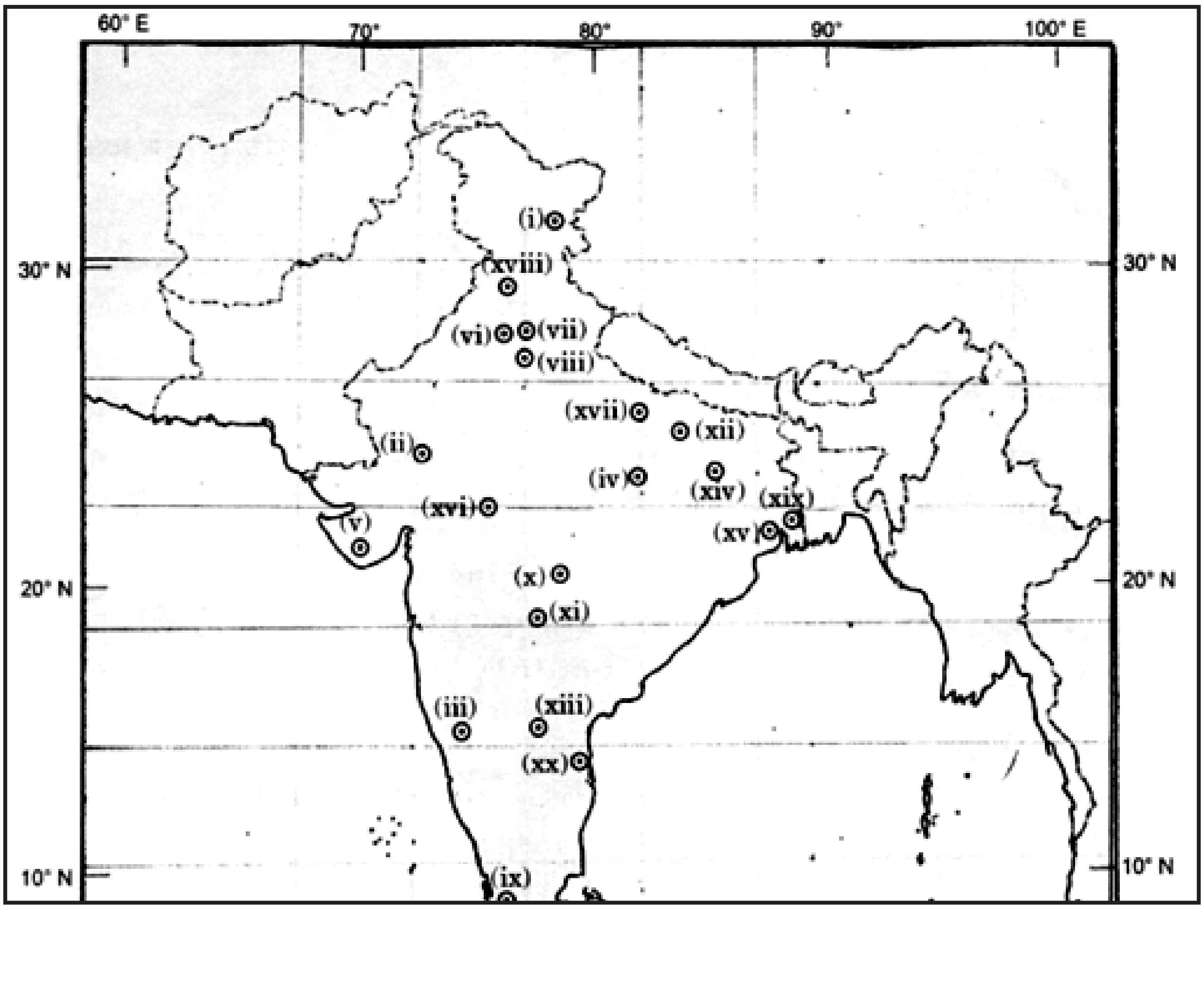

(xviii) मौर्योत्तर कालीन पकी ईटों का गृह स्थल
(xix) मौर्योत्तर कालीन टेराकोटा शिल्प केन्द्र
(xx) पल्लवकालीन महत्त्वपूर्ण बंदरगाह

(i) नवपाषाणिक स्थल (बुर्जहोम)

बुर्जहोम की खोज 1935 ई. में डी. टेरा एवं पीटरसन द्वारा की गई थी, वर्ष 1960 में पुरात विभाग ने इसकी खुदाई का कार्य शुरू किया।

- यहाँ से हसुली, खुरपी, छेनी, कुदाल के प्राप्त हुए तथा इसी के साथ भेड़-बकरी आदि की हड्डियों के साक्ष्य भी मिले।
- शवाधान के साक्ष्यों में मानव के साथ कुत्ते को दफनाए जाने के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं।

(ii) मध्यपाषाणिक स्थल (बागोर)

बागोर राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में कोठारी नदी के तट पर स्थित है।

- बागोर भारत में खोजा गया सबसे बड़ा मध्यपाषाणिक स्थल है। यहां व्यापक स्तर पर खुदाई की गई है।
- यहां से मानव द्वारा पशुपालन (भेड़, बकरी, आदि) के सबसे पुराने साक्ष्य प्राप्त हुए हैं। उत्खनन में सूक्ष्म पाषाण उपकरणों के अलावा, मानव कंकाल, मिट्टी के बर्तन और बाद के स्तरों में तांबे के उपकरण भी मिले हैं, जो यह दर्शाते हैं कि यहां कई सांस्कृतिक स्तरों पर निवास था।

(iii) पुरापाषाणिक स्थल (ऐहोले)

कर्नाटक के बागलकोट जिले में स्थित ऐहोले एक ऐतिहासिक मंदिर परिसर है। यह स्थान चालुक्य साम्राज्य की पहली राजधानी था।

- गाँव में पाए गए 125 प्राचीन मंदिरों को पुरातत्व विभाग ने 22 समूहों में वर्गीकृत किया है।
- ऐहोले में पूर्व-चालुक्य काल से संबंधित ईंटों के ढांचे भी प्राप्त हुए हैं। यहाँ के मंदिरों की वास्तुकला विभिन्न स्थापत्य शैलियों के उत्कृष्ट मिश्रण को दर्शाती है।

(iv) प्रस्तर कलाकृति युक्त नवपाषाणिक स्थल (महगड़ा)

महगड़ा नवपाषाण काल का पुरास्थल है, जो उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जिले की मेजा तहसील के पहाड़ी क्षेत्र में बेलन नदी के दाहिनी तट पर स्थित है, जो इलाहाबाद से 85 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

- महगड़ा सन् 1975-76 में इस पुरास्थल की खोज हुई थी।
- महगड़ा के उत्खन्न से धान की कृषि के संकेत मिले हैं।
- गाय, बैल, भैंस, बकरियाँ आदि यहाँ के लोगों के पालतू पशु थे और हिरण तथा जंगली सुअर का ये शिकार करते थे।

(v) सिंधु घाटी सभ्यता स्थल (लोथल)

लोथल प्राचीन सिंधु घाटी सभ्यता के शहरों में से एक बहुत ही महत्वपूर्ण बंदरगाह शहर था। लगभग 2400 ईसापूर्व पुराना यह शहर भारत के राज्य गुजरात के भाल क्षेत्र में स्थित है और इसकी खोज सन 1954 में हुई थी।

- लोथल को मिनी हडप्पा के नाम से भी जाना जाता है।
- लोथल बंदरगाह जो कि विश्व की प्राचीनतम ज्ञात गोदी है, सिंध में स्थित हड़प्पा के शहरों और सौराष्ट्र प्रायद्वीप के बीच बहने वाली साबरमती नदी की प्राचीन धारा के द्वारा शहर से जुड़ी थी, जो इन स्थानों के मध्य एक व्यापार मार्ग था।

(vi) अग्निकुण्ड युक्त प्रारंभिक हड़प्पीय स्थल (बनावली)

बनावली हरियाणा के हिसार जिले में रंगोई नदी के सूखे तल के पास स्थित है। बनावली से भी अग्नि-वेदिकाओं के प्रमाण मिले हैं।

- ये वेदिकाएँ किले के दक्षिणी भाग में पाई गई हैं और ये सामुदायिक अनुष्ठानों से जुड़ी मानी जाती हैं।
- उत्खनन के दौरान, कई कमरों वाला एक घर, एक रसोई, एक शौचालय और एक जार मिला, जिसे वॉश बेसिन माना जाता है।
- कई मुहरों और बाटों से पता चलता है कि यह घर किसी व्यापारी का हो सकता है।

(vii) उत्तर हड़प्पीय स्थल (आलमीरपुर)

पश्चिम उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में यमुना की सहायक हिण्डन नदी पर स्थित इस पुरास्थल की खोज 1958 में 'यज्ञदत्त शर्मा' द्वारा की गयी।

- आलमीरपुर गंगा-यमुना में पहला स्थल था जहां से हड़प्पा कालीन अवशेष प्रकाश में आए थे।
- यह हड़प्पा संस्कृति का सर्वाधिक पूर्वी पुरास्थल हैं। यह स्थल सैंधव सभ्यता की अन्तिम अवस्था को सूचित करता है।
- यहाँ मिट्टी के बर्तन, मनके एवं पिण्ड मिले है। यहाँ एक गर्त से रोटी बेलने की चौकी तथा कटोरे के टुकड़े प्राप्त हुए है। किन्तु मातृदेवी की मूर्ति और मुद्राएँ नहीं मिली है।

(viii) गेरुए रंग के मृदभांड (OCP) स्थल (हस्तिनापुर)

हस्तिनापुर पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में स्थित एक अत्यंत महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल है, और यह ओसीपी (Ochre Coloured Pottery) संस्कृति के प्रमुख स्थलों में से एक है।

- हस्तिनापुर में उत्खनन (excavation) में गेरू रंग के मृदभांड (OCP) प्राप्त हुए हैं।
- यह मृदभांड संस्कृति लगभग 2000 ईसा पूर्व से 1500 ईसा पूर्व के बीच की है और इसे कुछ विद्वानों द्वारा हड़प्पा संस्कृति के पतन के बाद गंगा-यमुना दोआब क्षेत्र में फैली एक समकालीन संस्कृति माना जाता है।
- ओसीपी के बाद, हस्तिनापुर में चित्रित धूसर मृदभांड (Painted Grey Ware - PGW) संस्कृति के भी प्रमाण मिले हैं।

(ix) मध्यपाषाणिक स्थल (मालमपल्ला)

केरल में वर्षा जल संचयन परियोजना के परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में महापाषाणकालीन कलशों की खोज हुई।

- यह खोज नेनमारा वन प्रभाग में कुंडलिक्कड़ पहाड़ी (जिसे मालमपल्ला या मलप्पुरम पहाड़ी के नाम से भी जाना जाता है) पर हुई।
- कलश दफन में मृत व्यक्ति के अवशेषों को मृद्भांड या कलश में रखकर दफना दिया जाता था।
- यह खोज मध्यपाषाण काल (इस स्थल पर सूक्ष्मपाषाण काल की

1 स्रोत : पुरातात्विक एवं साहित्यिक स्रोत

प्रश्न: प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत के रूप में विदेशी विवरण के कुछ लाभ हो सकते हैं, परन्तु इनमें कतिपय कमियां भी थीं। उपयुक्त उदाहरणों का हवाला देते हुए इस कथन का परीक्षण कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2022)

उत्तर: प्राचीन भारत के इतिहास की जानकारी के लिए भारत में आए विदेशी यात्रियों का वर्णन भी विशेष महत्त्वपूर्ण है। इन विदेशियों से भारत की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा नहीं की जा सकती। उनके वर्णन अधिकांशत: निष्पक्ष दिखाई देते हैं, किन्तु भारतीय समाज व उसकी भाषा की जानकारी न होने के कारण उन्होंने कुछ स्थानों पर कल्पित बातें भी लिखी हैं। कुल मिलाकर ये वृत्तान्त भारतीय इतिहास के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। इन यात्रियों में (A) ईरानी, (B) यूनानी, (C) चीनी व (D) मुस्लिम यात्रियों के वृत्तान्त मिलते हैं, जो उस काल की भारत की परिस्थिति का सजीव चित्र उपस्थित करते हैं।

(A) **ईरानी यात्री**–जब भारत की समृद्धि की चर्चा पश्चिमी देशों में जोर-शोर से होने लगेगी तो ईरान के राजा ने ई. पूर्व छठी शताब्दी के प्रारम्भ में स्काईलैक्स नामक विद्वान को भारत भेजा, उसने सेना सहित भारत आकर यहां की भौगोलिक स्थिति का अध्ययन किया। उसका भारत वृत्तान्त बड़ा रोचक है।

- इतना ही नहीं ईरान के सम्राट डेरियम ने भी भारत के बारे में लेख लिखे हैं। इन लेखों से भारत तथा ईरान के सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ता है।
- भारतवासियों की युद्ध कला को व यहां की खेती का भी वर्णन उसके लेखों में विद्यमान है। ईरान के राजवैद्य टेशियस ने भी भारत का वर्णन किया है, किन्तु वह अधिक विश्वसनीय नहीं है।

(B) **यूनानी यात्री**–सिकन्दर के साथ आए विद्वानों के भारत वर्णन अधिक विश्वसनीय व उपयोगी हैं। इनमें नियार्कस (NEARCKUS) नामक एक जन सेनापति था, दूसरा विद्वान सह-नाविक एरिस्टोबुलस (ARISTOBULUS) था, जिसने अपनी वृद्धावस्था में अपनी यात्रा का वर्णन लिखा है, किन्तु उनके वृत्तान्त अब उपलब्ध नहीं हैं।

- सिकन्दर की मृत्यु के पश्चात् उसके सेनापति सेल्युकस ने उसके पूर्वी साम्राज्य पर अधिकार कर लिया था। उसने भारत में मौर्य सम्राटों के दरबार में अपने राजदूत भेजे।
- चन्द्रगुप्त मौर्य से पराजित होकर उसने सन्धि कर ली और मेगस्थनीज (MEGASTHENES) को राजदूत बनाकर भेजा। वह लम्बे समय तक भारत में रहा और अपने ग्रन्थ 'इण्डिका' में भारत के शासन प्रबन्ध तथा भारतीय सामाजिक जीवन पर प्रकाश डाला, यद्यपि अब यह पुस्तक उपलब्ध नहीं है। किन्तु बाद के लेखकों–एरियन, अप्पियन (APPIAN), स्ट्रैबो व जस्टिन आदि ने मेगस्थनीज की पुस्तक से अनेक उद्धरण लिए हैं।
- एरियन के ग्रन्थों का ऐतिहासिक महत्त्व अधिक है। टॉलमी (PTOLOMY) ने भारत के भूगोल तथा प्लिनी ने पशुओं व वनस्पति का वर्णन किया है।

(C) **चीनी यात्री**–अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए अनेक धर्म प्रचारक मध्य एशिया में भेजे। जहां से भारतीय संस्कृति व बौद्ध धर्म का प्रचार सम्पूर्ण चीन में हो गया और चीनी लोग भारत को बड़े आदर से धर्म भूमि समझने लगे। अपनी धार्मिक जिज्ञासा को शान्त करने तथा बौद्ध धर्म के साहित्य का अध्ययन करने के लिए अनेक चीनी यात्री भारत आए और वह लम्बे समय तक यहीं रहे। यद्यपि उनके वृत्तान्त अधिकांशत: धार्मिक हैं, किन्तु उनमें तत्कालीन सामाजिक व राजनीतिक स्थिति की भी जानकारी मिलती है। यद्यपि इन जानकारियों के ऐतिहासिक प्रमाण पर इतिहासकारों में विभेद है।

- चीनी यात्रियों में सर्वाधिक महत्त्व फाहियान, ह्वेनसांग तथा इत्सिंग का है। फाहियान के द्वारा चन्द्रगुप्त द्वितीय के काल के भारत का वर्णन मिलता है। वह मूलत: धार्मिक वर्णन तक अपने को सीमित रखता है, फिर भी उसके वृत्तान्त का पर्याप्त ऐतिहासिक महत्त्व है।
- ह्वेनसांग सम्राट हर्ष के काल में भारत आया, लम्बे समय तक भारत में रहा। उसने धार्मिक वर्णन के साथ-साथ तत्कालीन भारत की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्थिति का भी वर्णन किया है।
- इत्सिंग सातवीं शताब्दी में भारत आया और बहुत समय तक विक्रमशिला व नालन्दा विश्वविद्यालयों में अध्ययन करता रहा। उसने भी उस समय की सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियों का वर्णन किया है।
- तिब्बती लेखकों में लामातारा नाम प्रसिद्ध है। उनके ग्रन्थों 'कंग्युर' तथा 'तंग्युर' में भारत का वर्णन मिलता है।

(D) **मुस्लिम यात्री**–नवीं शताब्दी के मध्य में एक अरब यात्री सुलेमान भारत आया, उसके वृत्तान्त में पाल व प्रतिहार

2 प्रागैतिहास एवं आद्य इतिहास

प्रश्न. "ताम्रपाषाणिक संस्कृति के लोग लघुपाषाणिक उपकरण में विशेषज्ञ थे और साथ ही प्रस्तर कार्य के कुशल कारीगर भी थे।" स्पष्ट कीजिए।

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तर: ताम्रपाषाण संस्कृति, जिसे "पत्थर-तांबा चरण" के नाम से भी जाना जाता है, तांबे और पत्थर का उपयोग किया जाना इसकी विशेषता थी और यह भारत में लगभग 2000 ईसा पूर्व से 700 ईसा पूर्व तक चली। ताम्रपाषाणिक (Chalcolithic) संस्कृति (लगभग 3500 ईसा पूर्व से 1000 ईसा पूर्व) एक संक्रमणकालीन चरण (Transitional Phase) था, जहाँ लोगों ने तांबे (Copper) का उपयोग शुरू कर दिया था, लेकिन वे अभी भी दैनिक कार्यों के लिए पत्थर के उपकरणों पर बहुत अधिक निर्भर थे। उनकी विशेषज्ञता दो मुख्य क्षेत्रों में स्पष्ट थी:

1. लघुपाषाणिक उपकरण की विशेषज्ञता

ताम्रपाषाणिक लोग, खासकर शिकार करने और फसल काटने के कार्यों के लिए, लघुपाषाणिक तकनीक में अत्यधिक कुशल थे:

- चूंकि तांबा अपेक्षाकृत दुर्लभ और महंगा था, इसलिए रोजमर्रा के काम के लिए क्वार्ट्ज, चर्ट और कैल्सिडोनी जैसे स्थानीय पत्थरों से बने छोटे, तेज औजारों का उपयोग जारी रहा।
- **कुशलता के प्रमाण:** वे विशेष रूप से निम्नलिखित सूक्ष्म, ज्यामितीय आकार के उपकरण बनाने में विशेषज्ञ थे:
- **तेज ब्लेड (Blades)** : लंबी, पतली और धारदार पत्तियाँ।
- **लूनेट्स (Lunes), ट्रैपीज (Trapezes) और त्रिकोण (Triangles):** इन छोटे टुकड़ों को लकड़ी या हड्डी के हत्थों में जड़कर मिश्रित औजार (Composite Tools) जैसे दरांती (sickles) या भाले के अग्रभाग बनाए जाते थे।

2. प्रस्तर कार्य में कुशल कारीगर

लघुपाषाणिक उपकरणों के अलावा, ताम्रपाषाणिक समुदायों ने अन्य प्रकार के प्रस्तर (पत्थर) कार्यों में भी दक्षता दिखाई:

- **कीमती पत्थर के मनके (Precious Stone Beads):** वे कार्नेलियन, जैस्पर, एगेट और स्टीटाइट जैसे अर्ध-कीमती पत्थरों को तराशकर सुंदर और बारीक मनके (Beads) बनाने में निपुण थे। इन मनकों को अत्यधिक पॉलिश किया जाता था और उनमें बारीक छेद (drilling) किए जाते थे, जो उनकी उन्नत कारीगरी का प्रमाण है।
- **पॉलिश किए गए उपकरण:** उन्होंने नवपाषाण काल की परंपरा को जारी रखते हुए पॉलिश किए गए पत्थर के औजार, विशेषकर कुल्हाड़ियाँ और छेनियाँ, बनाना जारी रखा।

निष्कर्ष:

अतः, ताम्रपाषाणिक संस्कृति धातु और पत्थर प्रौद्योगिकी का एक सफल संगम थी, जहाँ तांबे की शुरुआत के बावजूद, पत्थर के औजारों, विशेषकर लघुपाषाणिक और सजावटी पत्थरों के कार्य में उनकी दक्षता बनी रही और विकसित हुई।

प्रश्नः 'नवपाषाण युग में हुए महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के कारण यह युग एक क्रांति का प्रतिनिधित्व करता है।" परीक्षण कीजिए।

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023)

उत्तर: नवपाषाण काल की शुरुआत लगभग 10,000 वर्ष पूर्व हुई थी। नवपाषाण युग, मानव इतिहास में एक महत्वपूर्ण अवधि थी, जिसमें खानाबदोश, शिकारी संग्रहकर्ता जीवनशैली से स्थायी कृषि और पशुओं को पालतू बनाने की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। इस परिवर्तन से मानव समाज के विभिन्न पहलुओं में गहरा परिवर्तन आया। गॉर्डन चाइल्ड के शब्दों में "नवपाषाण क्रांति ने मनुष्य के अनुभवों के आपसी आदान-प्रदान और वितरण की प्रवृत्ति को तीव्रता प्रदान की"।

नवपाषाण युग की प्रमुख विशेषताएं

- **शिकारी से कृषक जीवन की ओर बदलाव:** शिकार और संग्रहण से कृषि की ओर स्थानांतरण ने मनुष्यों द्वारा अपना भोजन प्राप्त करने के तरीके में एक बुनियादी बदलाव ला दिया। उदाहरण के लिए- गेहूं, जौ जैसी फसलों तथा बकरी और भेड़ जैसे जानवरों को पालतू बनाने से स्थायी बस्तियों के विकास में मदद मिली।
- **स्थायी जीवन शैली:** मानव एक ही स्थान पर बसने लगा, जिससे गांवों की स्थापना हुई और बाद में जटिल शहरी सभ्यता विकसित हुई। उदाहरण के लिए- आधुनिक टर्की में चौटलहोयुक (सबसे प्रारंभिक ज्ञात नवपाषाणकालीन बस्तियों में से एक है।
- **नवाचारों को अपनाना:** नवपाषाण काल के लोगों ने नई तकनीकों और नवाचारों को अपनाया। इस युग में पॉलिश किए गए पत्थर के औजार, मिट्टी के बर्तन और बुनाई जैसे नए उपकरणों व प्रौद्योगिकियों का विकास देखा गया।
    - उदाहरण के लिए, भोजन और पानी के भंडारण और परिवहन के लिए मिट्टी के बर्तनों का उपयोग आरम्भ किया गया। तदनुसार कई परिवर्तन हुए, जिसमें कृषि की ओर रुख करने से अधिशेष खाद्य उत्पादन हुआ, जिससे बड़ी आबादी के लिए खाद्य पदार्थ उपलब्ध हो सका और सामाजिक पदानुक्रम का उदय हुआ।
- **सांस्कृतिक विकास:** नवपाषाण युग में कला, धार्मिक प्रथाओं और प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व का उदय हुआ। उदाहरण के लिए लास्कॉक्स (फ्रांस) जैसे स्थानों में गुफा चित्र, कलात्मक अभिव्यक्ति के प्रारंभिक रूपों की अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

4 महापाषाणयुगीन संस्कृतियां

प्रश्नः भारत में विभिन्न प्रकार की महापाषाणिक शवाधान प्रथाओं पर चर्चा कीजिए। इससे प्राप्त पुरातात्त्विक साक्ष्य हमें धार्मिक मान्यताओं और सांस्कृतिक प्रथाओं को जानने में कितनी मदद करते हैं? (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2024)

उत्तरः मेगालिथ प्राचीन काल में निर्मित विशाल पत्थर की संरचनाएं हैं। ये मुख्य रूप से दक्षिण भारत और पूर्वोत्तर भारत सहित भारत के विभिन्न भागों में पाए जाने वाले दफन स्थल हैं।

मेगालिथ के कुछ सबसे प्रचलित प्रकारः

- **मेनहिरः** मेनहिर सबसे सरल प्रकार के मेगालिथ पाए जाते हैं। वे बड़े सीधे पत्थर हैं जिन्हें प्राचीन लोगों द्वारा जमीन में लंबवत रखा गया था। मेनहिर का उपयोग धार्मिक या सांस्कृतिक उद्देश्यों के लिए किया जाता था।
- **डोलमेन्सः** डोलमेन्स मेगालिथ का एक और मुख्य प्रकार है। इनमें दो या दो से अधिक सीधे खड़े पत्थर होते हैं जो एक सपाट कैपस्टोन को सहारा देते हैं। प्राचीन भारतीयों द्वारा डोलमेन्स का उपयोग दफन कक्षों के रूप में किया जाता था।
- **केयर्नः** इस प्रकार के मेगालिथ शंक्वाकार आकार के होते हैं। ये मुख्य रूप से ऊंचे इलाकों, दलदली भूमि, पर्वत शिखरों और आस-पास के जलमार्गों में पाए जाते हैं।
- **क्रोम्लेचः** ये प्राचीन लोगों द्वारा बनाए गए बड़े पत्थरों से बने गोलाकार ढांचे हैं। इनका उपयोग अनुष्ठानों, धार्मिक अनुष्ठानों और सामाजिक समारोहों के लिए किया जाता था।
- **स्टोन सर्कलः** यह पत्थरों को एक घेरे में खड़ा करके बनाया जाता है। पत्थरों की व्यवस्था एक वृत्त या दीर्घवृत्त का आकार ले सकती है।

धार्मिक विश्वासों और सांस्कृतिक प्रथाओं के बारे में मेगालिथ से प्राप्त जानकारीः

- **परलोक में विश्वासः** दफन गड्ढे छोटे गड्ढे होते हैं जो कैपस्टोन से ढके होते हैं। इनका इस्तेमाल प्राचीन लोगों को परलोक के सामान के साथ दफनाने के लिए किया जाता था। कई प्राचीन भारतीयों को मेगालिथिक दफन गड्ढों में दफनाया गया था।
- **पूजा और अनुष्ठानों के लिए उपयोगः** पत्थर के घेरे प्राचीन भारतीयों द्वारा बनाए गए बड़े पत्थरों की गोलाकार व्यवस्था हैं। इनका उपयोग सूर्य पूजा, प्रकृति पूजा और ज्योतिष से संबंधित विभिन्न अनुष्ठानों को करने के लिए किया जाता था।
- **मेगालिथिक लोगों का कौशलः** मेगालिथ बनाने वाले लोग पत्थरों और हड्डियों से बने सरल औजारों का इस्तेमाल करते थे। उन्होंने पत्थरों को काटकर उन्हें आकार दिया और मेगालिथ के रूप में विशाल संरचनाओं का निर्माण किया। यह उनके कौशल, सहयोग और संगठन को दर्शाता है।
- **लोहे का प्रयोगः** अनेक महापाषाण स्थलों से लोहे के औजार मिले हैं, जिससे पता चलता है कि इस काल में लोहे का प्रयोग प्रचलित था।

भारत की मेगालिथिक संस्कृति एक अनूठी सांस्कृतिक प्रणाली थी जो अन्य समकालीन संस्कृतियों के साथ विद्यमान थी, लेकिन इसके अनूठे पहलू इसे अन्य संस्कृतियों के बीच सबसे महत्वपूर्ण बनाते हैं

प्रश्न. क्या महापाषाण को एकल, समरूप अथवा समकालीन संस्कृति का प्रतिनिधि मानना उपयुक्त होगा? महापाषाण-कालीन संस्कृतियों से किस प्रकार के भौतिक जीवन व सांस्कृतिक व्यवस्था का पता चलता है?

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2021)

उत्तरः महापाषाण कालीन संस्कृति से तात्पर्य उस काल से है, जब मृतकों को आबादी क्षेत्र से दूर कब्रिस्तानों में पत्थरों के बीच दफनाया जाता था। दक्षिण भारत में इस प्रकार से मृतकों को दफनाने की परम्परा लौह युग के साथ आरम्भ हुई। इस महापाषाण कालीन संस्कृति की सूचना हमें उनकी यथार्थ बस्ती से कम तथा कब्रों से ज्यादा मिलती है।

इस युग की भौतिक संस्कृति बर्तनों, पत्थर के औजारों, ताम्र/कांस्य की वस्तुओं तथा अन्य वस्तुओं पर आधारित थी। प्रथम चरण (2500 से 1800 C.E.) के बर्तन मुख्यतः हाथ से बनाए गए सलेटी अथवा मटमैले भूरे होते थे। सलेटी बर्तनों की विशेषता बर्तनों को पकाने के बाद उन पर लाल गेरू से रंगाई करना थी। इन बर्तनों में से कुछ ऐसे हैं जिनके पाए खोखले तथा वृत्ताकार हैं जो कि हड़प्पा पूर्व आमरी तथा कालीबंगन में मिले बर्तनों की किस्मों से मिलते-जुलते हैं।

प्रथम चरण से संबंधित मृद्भाण्ड की एक अन्य किस्म में चमकाए हुए काले एवं लाल बाह्य भाग वाले बर्तन जो बैंगनी रंग से रंगे जाते थे, मिलते हैं। द्वितीय चरण (1800-1500 C.E.) में चमकाए हुए काली एवं लालधारी वाले बर्तनों का चलन समाप्त हो जाता है और एक अन्य किस्म सामने आती है।

यह किस्म छिद्रित तथा टोटी वाले बर्तनों की है। मृद्भाण्ड तैयार करने में बाहरी भाग को खुरदरा बनाने की तकनीक अपनाई जाती थी

5 आर्य एवं वैदिक काल

प्रश्न: "प्रादेशिक गणराज्यों की उत्पत्ति उत्तर वैदिक काल में विकसित जीवन पद्धति के विरुद्ध प्रतिक्रिया में देखी गई है।" विश्लेषण कीजिए।

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तर: यह कथन छठी-पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में उत्तर वैदिक काल (लगभग 1000-600 ईसा पूर्व) के सामाजिक-राजनीतिक और सांस्कृतिक स्वरूपों की प्रतिक्रियास्वरूप प्रादेशिक गणराज्यों (गणराज्यों या संघों) के उदय पर प्रकाश डालता है। इस काल में, 16 महाजनपदों का उदय हुआ, जिनमें राजतंत्र (जैसे, मगध, कोसल, अवंती) का प्रभुत्व था, जबकि गणराज्य (जैसे, वज्जि, मल्ल, लिच्छवि, शाक्य) पूर्वी गंगा के मैदानों और हिमालय की तलहटी में केंद्रित थे। साहित्यिक स्रोत (बौद्ध पाली ग्रंथ, जैन आगम) और पुरातात्विक साक्ष्य इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं, लेकिन इसकी उत्पत्ति बहुक्रियात्मक थी—प्रतिक्रिया, जनजातीय निरंतरता और आर्थिक कारकों का मिश्रण। विश्लेषण इस कथन की वैधता का मूल्यांकन करता है।

उत्तर वैदिक काल की राजतंत्रात्मक प्रवृत्ति

उत्तर वैदिक काल (लगभग 1000 ईसा पूर्व से 600 ईसा पूर्व) की मुख्य विशेषताएँ, जिनके विरुद्ध गणराज्यों की प्रतिक्रिया हुई, निम्नलिखित थीं:

- **स्थायी राजतंत्र का उदय:** इस काल में राजा का पद वंशानुगत (Hereditary) हो गया और उसका प्रभाव बढ़ता गया। यज्ञों (जैसे राजसूय और अश्वमेघ) के माध्यम से राजाओं ने अपनी शक्ति को दैवीय (Divine) और क्षेत्रीय (Territorial) रूप से मजबूत किया।
- **अधिकार का केंद्रीकरण:** शक्ति का केंद्रीकरण राजा के हाथों में हो गया। मंत्रिपरिषद जैसी संस्थाओं का महत्व कम हुआ, जिससे शासक वर्ग और आम लोगों के बीच की दूरी बढ़ी।
- **कठोर वर्ण व्यवस्था:** समाज में ब्राह्मणों और क्षत्रियों का प्रभुत्व बढ़ा। वर्ण व्यवस्था अत्यधिक कठोर हो गई, जिससे वैश्य और शूद्रों के सामाजिक व आर्थिक अधिकारों पर प्रतिबंध लगा। वैश्य, जो बढ़ते व्यापार के कारण आर्थिक रूप से समृद्ध थे, सामाजिक प्रतिष्ठा से वंचित थे।
- **जटिल कर्मकांड:** यज्ञ और धार्मिक अनुष्ठान अत्यंत जटिल, महंगे और पशु बलि पर आधारित हो गए, जिससे आम लोगों (विशेषकर किसानों) और व्यापारियों पर आर्थिक बोझ पड़ा और मवेशियों की कृषि उपयोगिता खतरे में पड़ी।

गणराज्यों का उदय: प्रतिक्रिया के रूप में

गणराज्यों (जैसे वज्जी/लिच्छवी, शाक्य, मल्ल) का उदय, इन राजतंत्रात्मक प्रवृत्तियों के विरोध में एक वैकल्पिक सामाजिक-राजनीतिक मॉडल था:

प्रतिक्रिया का कारण (उत्तर वैदिक प्रवृत्ति)	गणराज्यों की प्रतिक्रिया
वंशानुगत राजतंत्र का केंद्रीकरण	**गैर-राजतंत्रात्मक शासन:** गणराज्यों में शक्ति किसी एक राजा के हाथों में नहीं, बल्कि **शासक वर्ग के प्रमुखों की सभा** (गण-परिषद) में निहित थी। प्रमुख निर्णय आम सहमति से लिए जाते थे।
सामाजिक पदानुक्रम और ब्राह्मणवादी प्रभुत्व	**अधिक समतावादी समाज:** गणराज्यों ने ब्राह्मणवादी प्रभाव को कम किया और **क्षत्रिय कुलीनों** का प्रभुत्व स्थापित किया। इनमें सामाजिक समानता की भावना अधिक थी, जिससे वैश्य और अन्य वर्गों को सामाजिक स्वीकार्यता मिली।
महंगे वैदिक कर्मकांड	**बौद्ध और जैन धर्म का समर्थन:** गणराज्यों ने कठोर वैदिक कर्मकांडों के बजाय **जैन और बौद्ध धर्म** जैसी नई विचारधाराओं को संरक्षण दिया, जो **सादगी, अहिंसा** (पशुओं की रक्षा) और **मितव्ययिता** पर जोर देती थीं। यह कृषि और व्यापार - आधारित अर्थव्यवस्था के लिए
व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अभाव	**सभा में भागीदारी:** गणराज्यों में कुलीन वर्ग के सदस्यों को शासन की **सभा** (Assembly) अधिक अनुकूल था। में भाग लेने और निर्णय लेने की स्वतंत्रता थी, जो राजतंत्र में संभव नहीं था।

निष्कर्ष:

प्रादेशिक गणराज्यों की उत्पत्ति वास्तव में उत्तर वैदिक राजतंत्रीय निरंकुशता, कर्मकांडों की अधिकता और सामाजिक कठोरता की प्रतिक्रिया के रूप में हुई, जो पूर्वी भारत में समतावादी सभाओं और श्रमण समर्थन में प्रकट हुई। हालाँकि, वे महाजनपद युग की पूर्व-विद्यमान जनजातीय संरचनाओं और आर्थिक आवश्यकताओं से भी प्रेरित थे।

6 महाजनपद काल

प्रश्नः "जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म द्वारा प्रस्तुत वैचारिक चुनौती की जड़ें पूर्वी भारत में कृषि आधारित बस्तियों के विस्तार से उत्पन्न सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों में निहित थीं।" व्याख्या कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः छठी शताब्दी ईसा पूर्व में जैन धर्म और बौद्ध धर्म द्वारा प्रस्तुत वैचारिक चुनौती, विशेष रूप से पूर्वी भारत (मगध और आसपास के क्षेत्रों) में कृषि बस्तियों के विस्तार के कारण होने वाले प्रमुख सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों से गहराई और आंतरिक रूप से जुड़ी हुई थी।

इस परिपेक्ष में इस बात को समझा जा सकता है कि कैसे नई आर्थिक संरचना मौजूदा वैदिक (ब्राह्मणवादी) सामाजिक और कर्मकांडी व्यवस्था से टकराती थी।

1. पूर्वी भारत में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन

छठी और चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के बीच गंगा के मैदान में शहरीकरण का दूसरा चरण देखा गया, जिसके दो प्रमुख कारण थे:

- **लौह प्रौद्योगिकीः** लोहे के औजारों के व्यापक उपयोग, विशेष रूप से घने जंगलों को साफ करने के लिए, इसने उपजाऊ गंगा घाटी में स्थायी और गहन कृषि बस्तियों के तेजी से विस्तार को संभव बनाया, जिससे कृषि अधिशेष में वृद्धि हुई।
- **व्यापार और नगरों का उदयः** कृषि अधिशेष ने व्यापार और वाणिज्य के उदय को बढ़ावा दिया, जिससे पाटलिपुत्र, कौशाम्बी और राजगृह जैसे शहरों का विकास हुआ। इससे शक्तिशाली नए वर्ग निर्मित हुएः वैश्य (व्यापारी/व्यापारी) और क्षत्रिय (शासक/प्रशासक), जिनकी संपत्ति केवल मवेशियों या अनुष्ठानों पर नहीं, बल्कि भूमि और व्यापार पर आधारित थी।

2. ब्राह्मणवादी चुनौती

ब्राह्मणों के प्रभुत्व वाली पारंपरिक वैदिक सामाजिक व्यवस्था ने उभरते वर्गों के सामने दो बड़ी बाधाएँ खड़ी कीं:

- **वैदिक कर्मकांड और पशुबलिः** वैदिक व्यवस्था पशुबलि (यज्ञ) पर अत्यधिक निर्भर थी, जिसके लिए मवेशियों का वध आवश्यक था। नई कृषि अर्थव्यवस्था में, मवेशी जुताई और कृषि जीविका के लिए आवश्यक हो गए। सबसे मूल्यवान आर्थिक संपत्ति की कर्मकांडीय हत्या ने नव-स्थापित कृषक समाज और वैश्य वर्ग की संपत्ति को सीधे तौर पर खतरे में डाल दिया।
- **सामाजिक पदानुक्रम (वर्ण व्यवस्था):** कठोर वर्णव्यवस्था ने ब्राह्मणों को शीर्ष पर और वैश्यों (धनी व्यापारी वर्ग) को तीसरे स्थान पर रखा, जो ब्राह्मणों और क्षत्रियों दोनों से नीचे था। अपनी अपार संपत्ति के बावजूद, वैश्यों को सर्वोच्च सामाजिक दर्जा और प्रतिष्ठा से वंचित रखा गया, जिससे सामाजिक आक्रोश पैदा हुआ।

जैन धर्म और बौद्ध धर्म ने इन चुनौतियों से बचने के लिए एक आकर्षक वैचारिक विकल्प प्रदान किया:

विशेषता	जैन धर्म और बौद्ध धर्म का समाधान	नए वर्गों के लिए आकर्षण
अहिंसा	दोनों दर्शनों ने **अहिंसा** (विशेषकर पशुओं के प्रति) पर दृढ़ता से उपदेश दिया।	**वैश्यः** पशुओं की सुरक्षा कृषि और व्यापार के लिए महत्वपूर्ण थी। अहिंसा ने उनकी संपत्ति की रक्षा के लिए एक नैतिक और आर्थिक आधार प्रदान किया।
सामाजिक समानता	दोनों आंदोलनों ने कठोर वर्ण व्यवस्था और ब्राह्मणों की अंतर्निहित श्रेष्ठता को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने जन्म के बजाय **कर्म** और व्यक्तिगत प्रयास पर जोर दिया।	**क्षत्रिय और वैश्यः** दोनों वर्गों को उच्च सामाजिक प्रतिष्ठा दी गई और उन्हें उनके आर्थिक प्रभाव के अनुरूप सामाजिक मान्यता की आवश्यकता को पूरा करते हुए, बिना किसी भेदभाव के **संघ** (मठवासी व्यवस्था) में स्वागत किया गया।
व्यापार को बढ़ावा	जैन धर्म को व्यापारी वर्ग के बीच विशेष संरक्षण मिला क्योंकि इसकी जीवनशैली की आवश्यकताएं (कीटों को नुकसान से बचाने के लिए खेती से बचना) उनके व्यापारिक व्यवसायों के अनुकूल थीं, और यह सामान्य तौर पर व्यापारिक अर्थव्यवस्था का समर्थक था।	**वैश्यः** ये दोनों धर्म, जटिल वैदिक प्रणाली के विपरीत, सुलभ थे और उन्होंने ईमानदारी और मितव्ययिता को बढ़ावा दिया, जो सफल व्यापार के लिए आवश्यक गुण थे।

7 मौर्य साम्राज्य

प्रश्नः मौर्यों ने भौतिक संस्कृति का प्रसार गंगा के मैदानों में कहाँ तक सुगम कर दिया? व्याख्या कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः मौर्यों ने भारतीय उपमहाद्वीप में पहला व्यापक, एकीकृत और केंद्रीकृत साम्राज्य स्थापित करके, गंगा के मैदानों की भौतिक संस्कृति के प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। मौर्य राज्यतंत्र ने सांस्कृतिक संचरण के एक शक्तिशाली और संगठित माध्यम के रूप में कार्य किया।

- ❖ यह प्रसार पूर्ण नहीं था, बल्कि प्रमुख प्रशासनिक मार्गों और नव-स्थापित बस्तियों तक ही सीमित था।

प्रसार की प्रक्रियाएँ:

मौर्य साम्राज्य की राजनीतिक और आर्थिक संरचना ने वे माध्यम प्रदान किए जिनके माध्यम से गंगा की भौतिक संस्कृति परिधीय क्षेत्रों तक फैली:

1. केंद्रीकृत प्रशासन और अवसंरचना:

- ❖ **सड़क नेटवर्क:** मौर्यों ने प्रमुख राजमार्गों (जैसे उत्तरापथ जो पाटलिपुत्र को तक्षशिला और उससे आगे जोड़ता था) का निर्माण और रखरखाव किया, जिससे अधिकारियों, सैनिकों, व्यापारियों और बौद्ध धम्म प्रचारकों की आवाजाही सुगम हुई। यह नेटवर्क सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए भौतिक धमनी के रूप में कार्य करता था।
- ❖ **प्रशासनिक केंद्र:** प्रांतीय राजधानियों (जैसे, तक्षशिला, उज्जैन, तोसली, सुवर्णगिरि) और छोटी प्रशासनिक चौकियों की स्थापना ने दूरस्थ क्षेत्रों में मगध शैली के प्रशासन, नगर नियोजन और वास्तुकला का परिचय दिया।
- ❖ **राज्य-प्रायोजित बंदोबस्त:** कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राज्य को अधिक आबादी वाले क्षेत्रों से कृषकों (वैश्यों) और शूद्र श्रमिकों को बुलाकर नई बस्तियाँ स्थापित करने की सलाह दी गई थी। ये नई बस्तियाँ गंगा के हृदयस्थल से तैयार सांस्कृतिक और तकनीकी ढाँचे के साथ स्थापित की गई थीं।

2. भौतिक कलाकृतियाँ और प्रौद्योगिकी

- ❖ **लौह प्रौद्योगिकी:** गंगा की भौतिक संस्कृति का मूल लौह औजारों (चाकूदार कुल्हाड़ियाँ, दरांती, हल) का गहन उपयोग था। मौर्य राज्य द्वारा दक्षिण बिहार (मगध) के समृद्ध लौह अयस्कों तक पहुँच को नियंत्रित करने के साथ, इन उत्कृष्ट औजारों की माँग और निर्माण बाहर भी होने लगा, जिससे नए क्षेत्रों में जंगलों की कटाई और गहन कृषि को बढ़ावा मिला।
- ❖ **उत्तरी काले पॉलिश किए हुए बर्तन (एनबीपीडब्ल्यू):** गंगा के मैदान में उत्पन्न यह विशिष्ट, अत्यधिक चमकदार, उच्च-गुणवत्ता वाला मिट्टी का बर्तन, उपमहाद्वीप के मौर्यकालीन स्थलों (जैसे, ओडिशा के शिशुपालगढ़ में) पर व्यापक रूप से पाया गया है। शाही प्रतिष्ठा और शहरी केंद्रों के साथ एनबीपीडब्ल्यू के जुड़ाव ने इसे व्यापक रूप से अपनाया।
- ❖ **पकी हुई ईंटें और कुएँ:** गंगा के मैदान की नम जलवायु के कारण निर्माण के लिए पकी हुई ईंटों का उपयोग, अधिक टिकाऊ निर्माण के लिए बाहरी प्रांतों में फैल गया। इसी प्रकार, घरेलू जल आपूर्ति के लिए रिंग कुओं और सोख गड्ढों का उपयोग, जो पहले गंगा क्षेत्र में आम था, फैल गया, जिससे बस्तियां नदी के किनारों से दूर चली गईं।

3. मानकीकरण और विचारधारा

- ❖ **मानकीकृत सिक्का:** अंकित सिक्के (अक्सर मगध मानक के अनुरूप) विशाल साम्राज्य में विनिमय का माध्यम बन गए। इस मानकीकरण ने विविध क्षेत्रीय अर्थव्यवस्थाओं को एक साझा मौद्रिक प्रणाली में एकीकृत किया, जो व्यापार के लिए आवश्यक थी।
- ❖ **शाही कला और स्थापत्य कला:** अशोक के अखंड पॉलिश किए हुए पत्थर के स्तंभों (जिनकी विशिष्ट उच्च पॉलिश की गई फिनिश और सारनाथ जैसे स्मारकीय पशु शीर्षों के साथ) ने उन क्षेत्रों में उन्नत पत्थर-काटने और पॉलिश करने की तकनीकों का परिचय दिया जो पहले केवल लकड़ी पर निर्भर थे। इस शाही कला रूप ने स्मारकीयता के लिए एक नया मानक स्थापित किया।
- ❖ **धम्म प्रचारक:** अशोक की धम्म नीति, जो धम्म महामात्रों और चट्टानों और स्तंभों पर उत्कीर्ण शिलालेखों के माध्यम से क्रियान्वित की गई, ने मुख्य क्षेत्र के विचारों, भाषा (ब्राह्मी लिपि में प्राकृत) और नैतिक प्रणाली को आदिवासी और परिधीय आबादी के सीधे संपर्क में लाया, जिससे अक्सर उन्हें एक अधिक स्थायी, किसान, कर-भुगतान करने वाली जीवन शैली अपनाने की प्रेरणा मिली।
प्रसार की सीमाएँ

व्यापक प्रसार के बावजूद, प्रसार एक समान नहीं था:

- ❖ **शहरी केंद्रों पर ध्यान:** मौर्य सांस्कृतिक प्रभाव शहरी केंद्रों (जो प्रायः प्रशासनिक केंद्र थे) और मुख्य व्यापार मार्गों पर सबसे अधिक था। सुदूर ग्रामीण क्षेत्र और घने जंगल नई भौतिक संस्कृति से अपेक्षाकृत अछूते रहे।
- ❖ **स्थानीय संस्कृति का स्थायित्व:** कई स्थानीय भौतिक परंपराएँ और जीवन-शैली, विशेष रूप से मगध, उज्जैन और तक्षशिला के मुख्य क्षेत्रों से परे, विद्यमान रहीं।

8 उत्तर मौर्य काल

प्रश्नः प्रथम से तृतीय शताब्दी ईसवी के दौरान भारत के मध्य एशिया से संपर्कों की प्रकृति एवं प्रभाव का परीक्षण कीजिए। इन संपर्कों ने भारत के राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों को किस प्रकार से प्रभावित किया?

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः पहली से तीसरी शताब्दी ईस्वी के दौरान भारत और मध्य एशिया के बीच संपर्क गहन, परिवर्तनकारी और कुषाण साम्राज्य द्वारा काफी हद तक सुगम बनाए गए थे। इन अंत:क्रियाओं की प्रकृति मुख्यतः राजनीतिक-सैन्य और वाणिज्यिक थी, जिसके परिणामस्वरूप भारत के राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों पर गहरा प्रभाव पड़ा।

भारत के मध्य एशियाई संपर्कों की प्रकृति (पहली-तीसरी शताब्दी ईस्वी)

इस अंत:क्रिया की प्रमुख विशेषताएँ थीं:

- **राजनीतिक प्रभुत्वः** इस काल में कुषाण साम्राज्य की स्थापना हुई, जो एक मध्य एशियाई खानाबदोश समूह (युएझी से जुड़ा) था जो दक्षिण की ओर बढ़ा। कनिष्क जैसे शासकों के अधीन, इस साम्राज्य का नियंत्रण मध्य एशिया (बैक्ट्रिया/सोग्डिया), अफगानिस्तान, पाकिस्तान और उत्तर भारत के बड़े हिस्से (वाराणसी तक गंगा का मैदान) तक फैले एक विशाल क्षेत्र पर था। इससे एक एकीकृत राजनीतिक क्षेत्र का निर्माण हुआ।
- **वाणिज्यिक राजमार्ग (रेशम मार्ग):** कुषाण रेशम मार्ग व्यापार में महत्वपूर्ण बिचौलिए थे। उत्तरी (मध्य एशियाई) और दक्षिणी (भारतीय) दोनों शाखाओं पर उनके नियंत्रण ने चीन, भारत और रोमन साम्राज्य के बीच वस्तुओं (रेशम, घोड़े, मसाले, रत्न) के निर्बाध प्रवाह को सुनिश्चित किया।
- **सांस्कृतिक संश्लेषणः** कुषाण दरबार हेलेनिस्टिक, ईरानी, मध्य एशियाई और भारतीय परंपराओं का सम्मिश्रण था। इस वातावरण ने कलात्मक और धार्मिक समन्वयवाद के एक नए युग को जन्म दिया।

भारत के राजनीतिक क्षेत्र पर प्रभाव

मध्य एशियाई संपर्कों ने उत्तर भारत के राजनीतिक परिदृश्य को नाटकीय रूप से बदल दियाः

- **राजनीतिक एकीकरणः** मौर्यों के पतन के बाद कुषाणों ने एक विशाल, स्थिर साम्राज्य की स्थापना की और विविध क्षेत्रों को एकीकृत किया। उनकी साम्राज्य संरचना ने गुप्त काल के बाद के विशाल प्रादेशिक राज्यों की नींव रखी।
- **राजत्व की अवधारणाएँ:** उन्होंने दैवीय राजत्व की मध्य एशियाई/ईरानी अवधारणा का परिचय दिया। कुषाण शासकों ने देवपुत्र (ईश्वर का पुत्र) और कैसर (सीजर) जैसी भव्य उपाधियाँ धारण कीं, जिन्हें अक्सर उनके सिक्कों पर मध्य एशियाई पोशाक (लंबे कोट, जूते) पहने और सिंहासन पर बलिदान देते हुए दिखाया जाता है।
- **स्वदेशी शासन का अंतः** शक (सीथियन) और कुषाणों के आगमन और स्थापना के कारण स्वदेशी गणतंत्र राज्यों (जैसे मालव और यौधेय) और मौर्य पतन के बाद फले-फूले छोटे राजतंत्रों का पतन हुआ।

भारत के सांस्कृतिक क्षेत्र पर प्रभाव

कला, धर्म और भाषा पर इसका प्रभाव शायद सबसे स्थायी थाः

- **गांधार कला विद्यालयः** यह कला विद्यालय उत्तर-पश्चिमी सीमांत क्षेत्र (आधुनिक पाकिस्तान/अफगानिस्तान) में कुषाणों के अधीन फला-फूला। यह हेलेनिस्टिक (यूनानी/रोमन) मूर्तिकला तकनीकों और बौद्ध विषयों का एक अनूठा मिश्रण था, जिसमें रोमन टोगा शैली के वस्त्रों में बुद्ध को मानव रूप दिया गया था।
- **मथुरा कला विद्यालयः** स्वदेशी होने के बावजूद, मथुरा विद्यालय ने कुषाण राजनीतिक प्रतीकों (जैसे, विदेशी पोशाक में कनिष्क की मूर्तियाँ) को भी अपनाया और उनके संरक्षण में विकसित हुआ। इसने लाल बलुआ पत्थर पर ध्यान केंद्रित किया और बुद्ध के साथ ब्राह्मण और जैन देवताओं को भी चित्रित किया।
- **धार्मिक समन्वयवादः** कुषाण सिक्कों पर भारतीय (शिव, विष्णु), यूनानी (हेराक्लीज), ईरानी (मिथ्रा, अहुरा मज्दा) और बौद्ध देवताओं सहित कई उल्लेखनीय देवी-देवताओं को दर्शाया गया है। यह धार्मिक सहिष्णुता और धर्मों के सम्मिश्रण को दर्शाता है।
- **महायान बौद्ध धर्म का उदयः** कुषाण संरक्षण, विशेष रूप से कनिष्क (जिन्होंने चतुर्थ बौद्ध संगीति का आयोजन किया था) के अधीन, ने महायान बौद्ध धर्म के उदय और विस्तार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। बोधिसत्व और मूर्ति पूजा (गांधार और मथुरा सम्प्रदायों द्वारा सुगम) पर बल देने वाले महायान सम्प्रदाय का मध्य एशियाई व्यापार मार्गों से चीन तक तीव्र गति से प्रसार हुआ।

भारत के आर्थिक क्षेत्र पर प्रभाव

इसका आर्थिक प्रभाव व्यापार और मुद्रीकरण के फलने-फूलने से सम्बंधित थाः

- **व्यापार का विस्तारः** रेशम मार्ग की प्रमुख धमनियों और भारत को पश्चिमी एशिया और रोमन साम्राज्य से जोड़ने वाले मार्गों

9 प्रारंभिक राज्य एवं समाज

प्रश्नः दक्षिण भारत के प्राचीन इतिहास की सामाजिक और सांस्कृतिक परम्पराओं का ज्ञान कराने में संगम साहित्य कहां तक सहायक है? (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023)

उत्तरः लगभग तीन सौ ईसा पूर्व से तीन सौ ईस्वी के बीच की अवधि में लिखा गया संगम साहित्य, प्राचीन दक्षिण भारत की सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं में अमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

- तमिल कविता का यह संग्रह उस युग के लोगों के जीवन, मूल्यों और प्रथाओं का एक ज्वलंत चित्रण प्रस्तुत करता है।
- संगम साहित्य मुख्य रूप से तमिल भाषा में लिखा गया है, संगम युग की प्रमुख रचनाओं में तोलकाप्पियम्, एतुत्तौके, पत्तुप्पातु, पदिनेकिल्लकणक्कु इत्यादि ग्रंथ तथा शिलप्पादिकारम, मणिमेखलै और जीवक चिंतामणि महाकाव्य शामिल हैं।

सामाजिक संरचना

संगम कविताएं शासकों, योद्धाओं, व्यापारियों, किसानों और कारीगरों सहित विभिन्न वर्गों के साथ एक श्रेणीबद्ध समाज का चित्रण करती हैं। उदाहरण के लिएः 'पुरननुरू' कविता में हमें विभिन्न व्यवसायों और उनसे जुड़ी सामाजिक स्थिति का संदर्भ मिलता है।

- संगम साहित्य में ब्राह्मणों के अतिरिक्त किसी अन्य वर्णों का उल्लेख व्यवस्थित रूप में नहीं मिलता। शुद्ध तमिलों में 'अरैवर' वर्ग सबसे अधिक प्रतिष्ठित था। उसके बाद 'उल्वर' वर्ग का स्थान था।
- चोल, चेर तथा पाण्ड्य शासक 'उल्वर' वर्ग के ही थे। इस वर्ग का कमजोर तबका 'वीलकुडी उल्वर' कहा जाता था। पशुपालक तथा शिकारी वर्ग 'अय्यर' तथा 'पद्वर' कहलाते थे।
- जाति के रूप में पुरूनारू की एक कविता में चार जातियों का उल्लेख है-तुडियन, पाणन, पड़ैयन तथा कडम्वन।
- संगम-साहित्य में सती प्रथा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। 'मणिमेकलै' में इस बात का उल्लेख है कि सच्ची पत्नी वही कहलाती थी, जो अपने पति की मृत्यु के बाद उसकी जलती हुई चिता में प्रविष्ट हो जाती थी।

सांस्कृतिक प्रथाएं और परंपराएं

संगम साहित्य त्योहारों, अनुष्ठानों और समारोहों सहित सांस्कृतिक घटनाओं का विशद वर्णन प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, कविता 'पट्टिनाप्पलाई' में पुहार शहर में मनाए जाने वाले भव्य चोल उत्सव का उल्लेख है।

- संगम साहित्य से पता चलता है कि इस युग में उत्तर और दक्षिण भारत के बीच सांस्कृतिक संपर्क स्थापित हो चुका था। वैदिक तथा ब्राह्मण धर्मों का समाज में प्रचार-प्रसार था। दक्षिण में वैदिक संस्कृति के प्रसार का श्रेय अगस्त्य को दिया गया है। पुरनानुरू तथा तोल्कापियम के अनुसार अगस्त्य का संबंध द्वारका से था।
- मणिमेकलै में वर्णित नगर के बाहर के शवाधानों का विवरण महापाषाणीय साक्ष्यों से मिलता-जुलता है। इस युग में वीरों और योद्धाओं की समाधियों के स्थान पर पत्थर गाड़ने की प्रथा थी जिन्हें 'वीरगल' अथवा 'वीर-प्रस्तर' कहा गया है। इससे लगता है कि महापाषाणिक संस्कृति की कुछ प्रथाएं संगम काल में भी प्रचलित थीं। स्त्रियां अपने मृत पतियों की आत्मा की शांति के लिए चावल के पिंड का दान देती थीं।
- तमिल कविताओं में महिलाओं की भूमिकाओं और स्थिति का वर्णन किया गया हैं, इनमे उन्हें सामाजिक ताने-बाने के अभिन्न अंग के रूप में चित्रित किया गया हैं। उदाहरण के लिएः 'कुरुंतोकाई' में महिलाओं की सुंदरता और गुणों की प्रशंसा करने वाले छंद शामिल हैं।

निष्कर्ष

- संगम साहित्य प्राचीन दक्षिण भारत की सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं में एक मूल्यवान धरोहर के रूप में कार्य करता है। विशद वर्णनों और काव्यात्मक छंदों के माध्यम से, यह उस युग की सामाजिक संरचना, आर्थिक गतिविधियों, सांस्कृतिक प्रथाओं और नैतिक मूल्यों का एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है।

प्रश्नः संगम साहित्य में परिलक्षित होने वाले दक्षिण भारत की सांस्कृतिक परम्पराओं के विशिष्ट लक्षणों की विवेचना कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2020)

प्रश्न की मांगः संगम साहित्य में परिलक्षित होने वाली दक्षिण भारत की सांस्कृति परंपराओं की विशेषताओं पर चर्चा करनी है।

उत्तरः देश के दक्षिणी भाग के प्रारंभिक तमिल समाज में संस्कृति और प्रकृति से जुड़ाव इतना अधिक देखने को मिलता है कि वह दक्षिण भारत की सांस्कृतिक परंपराओं का विशिष्ट लक्षण बन गया। दक्कन अर्थात भारतीय प्रायद्वीप (कृष्णा एवं तुंगभद्रा नदी के दक्षिण में स्थित क्षेत्र) में लगभग 300 ईसा पूर्व से 300 ईस्वी की अवधि को संगम काल के नाम से जाना जाता है। संगम तमिल कवियों का एक संगम या सम्मलेन था, जो संभवतः किन्हीं प्रमुखों या राजाओं के संरक्षण में ही आयोजित होता था। आठवीं सदी ई. में तीन संगमों का वर्णन मिलता है। पाण्ड्य राजाओं द्वारा इन संगमों को शाही संरक्षण प्रदान किया गया। ये

10 गुप्त वंश, वाकाटक एवं वर्द्धन वंश

प्रश्नः पूर्वगुप्तयुगीन भारत की तुलना में गुप्त युग में महिलाओं की स्थिति का आकलन कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023)

उत्तरः प्राचीन भारत में गुप्त काल में उल्लेखनीय सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन देखे गए, जिनमें महिलाओं की स्थिति और भूमिका में बदलाव भी शामिल थे। तुलनात्मक रूप से, इन परिवर्तनों के पूर्व-गुप्त युग के संबंध में विश्लेषण से इसकी वास्तविक स्थिति की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इन परिवर्तनों का तुलनात्मक अध्ययन इस प्रकार है:

शिक्षा के अवसर

- **पूर्व-गुप्त युगः** गुप्त काल से पहले उत्तर-वैदिक काल में कुछ अपवादों को छोड़कर, महिलाओं के लिए शैक्षिक अवसर सीमित थे।
- **गुप्त कालः** गार्गी और मैत्रेयी जैसी महिला विद्वानों से संबंधित प्राप्त साक्ष्य के अनुसार गुप्त युग में महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त था

वैवाहिक प्रथाएं

- **पूर्व-गुप्त युगः** विधवा पुनर्विवाह की अनुमती थी। सती प्रथा क प्रचलन ज्यादा नहीं था लेकिन इस प्रथा के कुछ साक्ष्य प्राप्त हुए हैं।
- **गुप्त कालः** स्त्रियों की स्थिति में सामान्यतः गिरावट आई। बाल विवाह का प्रचलन था। सामान्यतः 12-13 वर्षों में लड़कियों की शादी होती थी। याज्ञवल्क्य स्मृति में लड़कियों के उपनयन एवं वेदाध्ययन का निषेध किया है। नारद एवं पाराशर विधवा विवाह का समर्थन करते हैं, परन्तु वृहस्पति द्वारा इसका विरोध किया गया है।

आर्थिक क्रियाकलाप

- **पूर्व-गुप्त युगः** पूर्व-गुप्त काल में महिलाएं कृषि और शिल्प-आधारित व्यवसायों में सक्रिय रूप से शामिल थीं।
- **गुप्त कालः** विशेषकर कृषि प्रधान समाजों में महिलाओं ने आर्थिक गतिविधियों में योगदान देना जारी रखा।

धार्मिक भूमिका

- **पूर्व-गुप्त युगः** पहले के कालों में भी महिला देवताओं की पूजा की जाती थी।
- **गुप्त कालः** लेकिन गुप्त युग में देवी पूजा को अधिक बल मिला और यज्ञ और अनुष्ठानों में देवियों के महत्त्व में वृद्धि हुई।

निष्कर्ष

- पूर्व-गुप्त युग की तुलना में गुप्त काल में महिलाओं की स्थिति में सूक्ष्म परिवर्तन देखा गया। जहां शिक्षा और कानूनी मान्यता में प्रगति हुई, वहीं बाल विवाह जैसी प्रथाओं के रूप में चुनौतियां भी थीं।

प्रश्नः *गुप्त शासकों की आर्थिक उपलब्धियां एक ऐसी प्रक्रिया की परिणति थी, जो कुषाण शासकों के समय शुरू हुई थी। टिप्पणी कीजिए।* **(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2022)**

उत्तरः मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद दीर्घकाल तक भारत एक शासन सूत्र के अन्तर्गत नहीं आ सका. मौर्य साम्राज्य के विघटन के बाद उत्तरी भारत की अस्थिर राजनीतिक स्थिति का लाभ भारतीय-यूनानी, शक तथा कुषाणों ने उठाया। इन विदेशी आक्रमणकारियों में स्वयं को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कुषाण थे।

- उधर दक्कन और दक्षिणी भारत में सातवाहन वंश ने स्थिरता लाने का कार्य किया; लेकिन ये दोनों साम्राज्य (कुषाण तथा सातवाहन) तीसरी शताब्दी ई. तक समाप्त हो गए। देश की रही-सही राजनैतिक एकता भी अब छिन्न-भिन्न हो गई। सौभाग्यवश इस राजनीतिक विघटन का सामना करने के लिए भारत के तीन भागों में तीन नए राजवंशों का उदय हुआ। मध्य देश के पश्चिमी भाग में नाग वंश, दक्कन में वाकाटक तथा पूर्वी भारत में गुप्तवंश।
- इन तीनों में गुप्त के शासकों को सर्वाधिक सफलता मिली। सम्भवतः 275 ई. के आसपास गुप्त साम्राज्य सत्तारूढ़ हुआ। उन्होंने सर्वप्रथम अपना शासन सम्भवतः प्रयाग, अयोध्या, मगध तथा मध्य गंगाघाटी में शुरू किया। धीरे-धीरे उनका प्रभाव लगभग सारे भारत में फैल गया। इतिहासकार गुप्त साम्राज्य की सफलता एवं उदय के अनेक कारण बताते हैं।
- उन्होंने बटन लगे कोटों, जूतों, पतलूनों आदि का प्रयोग कुषाणों से सीखा था। इन सबसे उनकी सैनिक गतिशीलता बढ़ी और वे उत्कृष्ट घुड़सवार बन गये। कुषाणों की सेना में हाथियों एवं रथों के स्थान पर घोड़ों का अधिक प्रयोग किया जाता था। गुप्त लोगों ने भी घोड़ों को अपनी सेना में प्रमुख स्थान दिया। निःसन्देह इसका लाभ गुप्तों को अपने प्रतिद्वंद्वियों के विरुद्ध प्राप्त हुआ।
- गुप्त शासकों ने अपने राजनीतिक प्रतिस्पर्द्धी नाग, वाकाटक तथा गणराज्यों के शासकों से कूटनीति एवं वैवाहिक सम्बन्धों द्वारा अपनी शक्ति को सुदृढ़ किया।

द्वितीय प्रश्न–पत्र

1 भारत में यूरोप का प्रवेश

प्रश्नः "कर्नाटक युद्धों के दौरान, फ्रांसीसी स्थिति जिसने एक समय भारतीय विश्व को अपनी राजनीतिक सफलताओं से चकित कर दिया था, उसका अंत अपमान और विफलता में होना तय था।" व्याख्या कीजिए।

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः कर्नाटक युद्धों के दौरान फ्रांस की स्थिति इस दुखद क्रम को बखूबी दर्शाती है: शुरुआती सफलता के बाद अंततः अपमान और असफलता मिली। डुप्ले के नेतृत्व में फ्रांसीसियों ने क्षेत्रीय विजय और भारतीय राजनीति में हेराफेरी की रणनीति का बीड़ा उठाया, अपार प्रतिष्ठा हासिल की, लेकिन अंततः आंतरिक कमजोरियों और ब्रिटिश श्रेष्ठता के मिश्रण के आगे घुटने टेक दिए।

प्रथम और द्वितीय कर्नाटक युद्ध में सफलताः

भारतीय जगत में फ्रांसीसी राजनीतिक सफलता का चरम बिंदु मुख्यतः पांडिचेरी के गवर्नर-जनरल डुप्ले की रणनीतिक प्रतिभा के कारण था:

- **अग्रणी राजनीतिक हस्तक्षेपः** डुप्ले पहला यूरोपीय था जिसने यह पहचाना कि मुगल साम्राज्य के पतन और उसके बाद क्षेत्रीय शक्तियों (जैसे कर्नाटक के नवाब और हैदराबाद के निजाम) के बीच उत्तराधिकार के विवादों ने न केवल व्यापार, बल्कि राजनीतिक प्रभुत्व का भी अवसर प्रदान किया।
- **सैन्य श्रेष्ठता (सेंट थोम का युद्ध, 1746):** सेंट थोम (अड्यार) के युद्ध में कर्नाटक के नवाब की विशाल सेना पर फ्रांसीसी विजय ने अनुशासित यूरोपीय-प्रशिक्षित सैनिकों (भारतीय सिपाहियों सहित) की पारंपरिक भारतीय सेनाओं पर अपार श्रेष्ठता का प्रदर्शन किया। इस शानदार सफलता ने राजनीतिक हस्तक्षेप को बढ़ावा दिया।
- **दक्कन के मध्यस्थ (द्वितीय कर्नाटक युद्ध):** उत्तराधिकार विवादों में दावेदारों - हैदराबाद में मुजफ्फर जंग और कर्नाटक में चंदा साहिब - का समर्थन करके, डुप्ले ने अपने योग्य सेनापति बुस्सी के माध्यम से, दक्कन और कर्नाटक दोनों के सिंहासनों पर फ्रांसीसी सहयोगियों को बिठाया। 1750 के आसपास, कुछ समय के लिए, फ्रांसीसी प्रभाव और प्रतिष्ठा अपने चरम पर पहुँच गई, और दक्षिण भारत में प्रमुख राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरी।

अपमान और असफलता (1754 के बाद और तीसरे कर्नाटक युद्ध)

आंतरिक और बाह्य कारकों के संगम के कारण फ्रांसीसी स्थिति का पतन होना तय था:

1. राजनीतिक भूलें और समर्थन का अभाव

- **डुप्ले की वापसी (1754):** डुप्ले के युद्धों से होने वाले भारी वित्तीय व्यय से चिंतित और यूरोप में शांति की इच्छा से, फ्रांसीसी सरकार ने उसे फ्रांस वापस बुला लिया। यह एक बड़ी राजनीतिक भूल थी, जिसने साम्राज्य-निर्माण की दूरदर्शिता और प्रतिभा वाले एकमात्र फ्रांसीसी नेता को हटा दिया।
- **सरकारी समर्थन का अभावः** स्वायत्त ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के विपरीत, फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कंपनी एक राज्य के स्वामित्व वाला उद्यम था जिस पर फ्रांसीसी राजशाही का कड़ा नियंत्रण था। फ्रांसीसी सरकार ने यूरोपीय युद्धों को प्राथमिकता दी और अक्सर डुप्ले की महत्वाकांक्षी लेकिन महंगी भारतीय योजनाओं को बनाए रखने के लिए आवश्यक धन या सुदृढीकरण को मंजूरी देने से इनकार कर दिया।

2. संसाधनों और कमान में ब्रिटिश वर्चस्व

- **नौसेना प्रभुत्वः** ब्रिटिश शाही नौसेना ने हिंद महासागर में स्पष्ट श्रेष्ठता बनाए रखी। यह नौसैनिक शक्ति अत्यंत महत्वपूर्ण थी, जिससे अंग्रेज फ्रांसीसी बंदरगाहों (विशेषकर पांडिचेरी) की नाकाबंदी कर सके और युद्ध के दौरान फ्रांस से आने वाली अतिरिक्त सहायता और आपूर्ति रोक सके।
- **बंगाल के संसाधनों पर नियंत्रणः** प्लासी के युद्ध (1757) में ब्रिटिश विजय ने उन्हें बंगाल के विशाल राजस्व संसाधनों पर नियंत्रण प्रदान किया। इस धन ने अंग्रेजों को कर्नाटक युद्धों के लिए लगभग असीमित वित्तीय कोष प्रदान किया, जिसकी बराबरी नकदी की कमी से जूझ रहे फरांसीसी नहीं कर सकते थे।
- **उत्कृष्ट नेतृत्वः** रॉबर्ट क्लाइव (जिन्होंने आर्कोट की घेराबंदी के दौरान फ्रांसीसी पकड़ को तोड़ा) और सर आयर कूट जैसे नेताओं के अनुशासित और सुसंगत नेतृत्व से अंग्रेजों को लाभ हुआ। डुप्लेक्स की जगह लेने वाला फ्रांसीसी नेतृत्व, विशेष रूप से तीसरे कर्नाटक युद्ध के दौरान काउंट डी लाली, अक्सर उतावला, अहंकारी और रणनीतिक गलतियाँ करने वाला था (जैसे हैदराबाद से बुस्सी को वापस बुलाना)।

3. निर्णायक प्रहार

- **वांडिवाश का युद्ध (1760):** वांडिवाश का युद्ध निर्णायक मोड़ था। आयर कूट के नेतृत्व में अंग्रेजों ने काउंट डी लाली के नेतृत्व में फ्रांसीसियों को निर्णायक रूप से पराजित किया।
- **पांडिचेरी का पतन (1761):** वांडिवाश के बाद, अंग्रेजों ने पांडिचेरी की घेराबंदी कर उस पर कब्जा कर लिया। पेरिस की संधि

2 भारत में ब्रिटिश प्रसार

प्रश्नः "अपने उदय की आकस्मिकता, अपनी सफलताओं की चमक तथा अपने पराभव की पूर्णता में सिख राजतन्त्र नेपोलियन की भाँति था।"

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः इतिहासकार जे. डी. कनिंघम या लेपेल ग्रिफिन द्वारा उद्धृत यह उद्धरण, कि "सिख राजतंत्र अपने उदय की अचानकता, अपनी सफलता की चमक और अपने पराभव की पूर्णता में नेपोलियन जैसा था," एक ऐतिहासिक रूप से गहन तुलना है। यह महाराजा रणजीत सिंह (1780-1839) के अधीन सिख साम्राज्य के तीव्र, किन्तु अल्पकालिक, प्रक्षेपवक्र का प्रभावी ढंग से सारांश प्रस्तुत करता है।

1. इसके उदय की आकस्मिकता

सिख राजतंत्र का उदय उल्लेखनीय रूप से तीव्र था, जो फ्रांसीसी क्रांति की अराजकता से नेपोलियन के उत्थान को दर्शाता है:

- **मुगलोत्तर अराजकता:** जिस प्रकार नेपोलियन ने बदनाम फ्रांसीसी प्राचीन शासन से सत्ता को सुदृढ़ किया, उसी प्रकार रणजीत सिंह मुगल साम्राज्य के पतन और 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अफगान दुर्रानियों के बार-बार आक्रमणों से उत्पन्न राजनीतिक शून्य से उभरे।
- **मिसलों का एकीकरणः** पंजाब बारह युद्धरत सिख मिसलों (संघों) में विभाजित हो गया। 1799 तक, छोटी सुकरचकिया मिसल के प्रमुख रणजीत सिंह ने लाहौर पर कब्जा कर लिया और 1801 तक, खुद को महाराजा घोषित कर दिया। एक विखंडित राज्य का एक दुर्जेय साम्राज्य में एकीकरण दो दशकों से भी कम समय में पूरा हुआ।
- **स्व-निर्मित सम्राटः** नेपोलियन की तरह, जिसने 'जमीन पर पड़ा ताज पाया और उसे अपनी तलवार से उठा लिया,' रणजीत सिंह ने अपनी गद्दी सैन्य प्रतिभा और राजनीतिक कुशाग्रता से अर्जित की, न कि विरासत में मिली शाही वंशावली से।

2. इसकी सफलता की चमक

- **सैन्य आधुनिकीकरणः** यूरोपीय प्रशिक्षित सेनाओं की श्रेष्ठता को पहचानते हुए, रणजीत सिंह ने दुर्जेय खालसा सेना (फौज-ए-खास) का गठन किया। उन्होंने अपनी पैदल सेना और तोपखाने को प्रशिक्षित करने के लिए यूरोपीय और अमेरिकी अधिकारियों (जैसे वेंचुरा और एलार्ड, जिनमें से कुछ पूर्व नेपोलियन जनरल थे) को नियुक्त किया, जिससे एशिया की सबसे अनुशासित और सुसज्जित सेनाओं में से एक का निर्माण हुआ।
- **क्षेत्रीय विस्तारः** उन्होंने सतलुज नदी के उत्तर में क्षेत्रों को समेकित किया और अपने साम्राज्य का विस्तार वर्तमान हिमाचल प्रदेश, कश्मीर, मुल्तान और पेशावर तक किया। महत्वपूर्ण रूप से, उन्होंने अफगानों की शक्ति को नियंत्रित किया और अस्थिर उत्तर-पश्चिमी सीमांत क्षेत्र को सुरक्षित किया।

3. इसके पराभव की पूर्णता

अंतिम, दुखद चरण में, संस्थापक की मृत्यु के तुरंत बाद सिख साम्राज्य का तेजी से पतन हुआ:

- **1839 के बाद सत्ता का शून्यः** 1839 में रणजीत सिंह की मृत्यु ने एक गंभीर सत्ता शून्यता पैदा कर दी, ठीक उसी तरह जैसे वाटरलू (1815) में नेपोलियन की हार ने उनके साम्राज्य का निर्णायक रूप से अंत कर दिया था। छह वर्षों के भीतर, सिख दरबार अराजकता, महलों में क्रांति और कमजोर उत्तराधिकारियों की हत्याओं में डूब गया।
- **आंग्ल-सिख युद्ध (1845-1846 और 1848-1849):** आंतरिक अराजकता और ब्रिटिश विस्तारवादी नीति के कारण आंग्ल-सिख युद्ध हुए। खालसा सेना की भीषण लड़ाई और रणजीत सिंह के उत्कृष्ट प्रशिक्षण के बावजूद, राज्य को अंततः अपने ही आंतरिक नेतृत्व (जनरल लाल सिंह और तेज सिंह) द्वारा धोखा दिया गया और ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के श्रेष्ठ संसाधनों के आगे उसे दबा दिया गया।
- **विलयः** द्वितीय आंग्ल-सिख युद्ध के बाद 1849 में अंग्रेजों ने पंजाब पर कब्जा कर लिया, जिसके परिणामस्वरूप सिख साम्राज्य का पूर्ण और समग्र विघटन हो गया - एक ऐसे राजतंत्र का तीव्र और निर्णायक अंत जो समान गति और सफलता के साथ उभरा था।

प्रश्नः "पेशवाओं के अधीन मराठा व्यवस्था में घरेलू (आन्तरिक) मतभेदों का बीजारोपण काफी घना तथा गहरा था।"

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः यह कथन अत्यंत सटीक है। जिस संरचना और नीतियों ने पेशवाओं के अधीन मराठों को विस्तार करने का अवसर दिया, उसी ने एक साथ घातक दोष भी उत्पन्न किए, जिससे घरेलू कलह (आंतरिक संघर्ष और प्रतिद्वंद्विता) व्यवस्था में गहराई से समाहित हो गए, जिससे उसका पतन तीव्र हो गया।

पेशवा नीतियों द्वारा बोए गए कलह के बीज

आंतरिक कलह की जड़ शिवाजी के केंद्रीकृत, योग्यता-आधारित राज्य को एक विकेन्द्रीकृत, सामंती व्यवस्था में बदलने में निहित थी:

3 ब्रिटिश राज्य की प्रारंभिक संरचना

प्रश्नः भारतीय परिषद विधेयक, 1861 को प्रस्तुत करते हुए अंग्रेजों का मत था कि भारत के लिए एकमात्र उपयुक्त सरकार 'घर से नियंत्रित तानाशाही थी'। टिप्पणी कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023)

उत्तरः 1861 के भारतीय परिषद अधिनियम ने भारत में कार्यकारी परिषद प्रणाली में परिवर्तन लाया। इसे तत्कालीन वायसराय और गवर्नर-जनरल लॉर्ड कैनिंग द्वारा पेश किया गया था। अधिनियम ने एक पोर्टफोलियो प्रणाली को जन्म दिया और परिषद के भीतर विभाग बनाए।

- इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य अंग्रेजों द्वारा अपने कार्यों को जारी रखने के लिए भारतीयों से समर्थन प्राप्त करना था। भारतीय नागरिकों के साथ-साथ प्रेसीडेंसी द्वारा प्रतिनिधित्व की मांग बढ़ रही थी जिससे ब्रिटिश सरकार इस कानून को लागू करने के लिए तैयार हो गई।

भारतीय परिषद् अधिनियम 1861 के प्रमुख बिंदु

- 1861 के भारतीय परिषद अधिनियम को भारतीयों की प्रशासनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संस्थागत बनाया गया था।
- सरकार की शक्ति और संरचना को बहाल करने के लिए 1861 के भारतीय परिषद अधिनियम में संशोधन किया गया था। इसने कानून में कार्यकारी भूमिकाओं के पोषण पर भी ध्यान केंद्रित किया।
- ब्रिटिश सरकार ने गवर्नर-जनरल की दक्षता बढ़ाने के लिए पोर्टफोलियो प्रणाली की शुरुआत की।
- दूसरी ओर, इसने कार्यकारी परिषद की भूमिका को बदल दिया और एक लघु कैबिनेट पोर्टफोलियो प्रणाली को अपनाया।
- कार्यकारी प्रणाली के प्रत्येक सदस्य को गृह, राजस्व, सेना, वित्त और कानून में एक विशिष्ट भूमिका दी गई थी।
- भारतीय परिषद अधिनियम 1861 लॉर्ड कैनिंग द्वारा पेश किया गया था। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य एक ऐसी परिषद का निर्माण करना था जो संस्थागत हो और जिसमें भारतीय भी शामिल हों।
- इस अधिनियम के माध्यम से अंग्रेजों ने भारतीयों से समर्थन मांगने की योजना बनाई।
- तीन भारतीय थे जो 1862 की विधान परिषद का हिस्सा थे: पटियाला के महाराजा, बनारस के राजा, और सर दिनकर राव।
- गवर्नर जनरल अंतिम प्राधिकारी था और परिषद के सुझाव के बिना आपातकालीन स्थितियों में अधिनियमों को भंग कर सकता था और नियमों को बढ़ा सकता था या हटा सकता था।
- इस अधिनियम ने मद्रास और बॉम्बे प्रेसीडेंसी की विधायी शक्तियों को बहाल करने में मदद की।

भारतीय परिषद अधिनियम 1861 का प्रभाव

- इस अधिनियम ने विधायी प्रणाली में कुछ बदलाव लाने में मदद की।
- भारतीयों की भागीदारी ने देश के लिए नई संभावनाएं और उम्मीदें पैदा कीं।
- विभागों का विभाजन कार्यप्रणाली में सुधार का एक सुव्यवस्थित तरीका था। हालांकि इसने भारतीय प्रतिनिधित्व को प्रोत्साहित किया, लेकिन इस समावेशन से कोई बड़ा बदलाव या परिणाम नहीं हुआ।
- यद्यपि 1861 के भारतीय परिषद अधिनियम में 'चुनाव' शब्द का उपयोग नहीं किया गया था, फिर भी कुछ गैर-आधिकारिक प्रतिनिधियों को चुनने के लिए अप्रत्यक्ष चुनाव प्रक्रिया का उपयोग किया गया था।

निष्कर्ष

- 1861 और 1892 के भारतीय परिषद अधिनियम ने भारतीयों की आकांक्षा पूरी की। उन्हें कानून और वित्त, रक्षा, कानून और राजस्व जैसे महत्वपूर्ण मामलों में भाग लेने की अनुमति दी गई। इन दोनों अधिनियमों को भारतीयों के अधिकारों और हितों की रक्षा में एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में चिह्नित किया गया था।
- विधान परिषद की सीमित भूमिका जैसी कमियों के बावजूद यह अधिनियम बेहतरी की दिशा में एक कदम था और इसलिए यह भारत के औपनिवेशिक इतिहास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

प्रश्नः देशी प्रेस अधिनियम (वर्नाक्यूलर प्रेस ऐक्ट), 1878 को देशी प्रेस पर बेहतर नियंत्रण के लिए बनाया गया था जिससे सरकार और अधिक प्रभावी तरीकों से राजद्रोही लेखन को दंडित एवं दमित करने में सशक्त बन सके।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2021)

उत्तरः अंग्रेज सरकार द्वारा भारत में सन् 1878 में देशी प्रेस अधिनियम (VERNACULAR PRESSACT) पारित किया गया ताकि भारतीय भाषाओं के पत्र-पत्रिकाओं पर और कड़ा नियंत्रण रखा जा सके। उस समय लॉर्ड लिट्टन भारत का वाइसराय था।

- इस अधिनियम में पत्र-पत्रिकाओं में ऐसी सामग्री छापने पर कड़ी कार्यवाही का प्रावधान था जिससे जनता में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध असंतोष पनपने की सम्भावना हो। वस्तुतः यह कानून भाषाई समाचार-पत्रों को दबाने के लिए लाया गया था।
- देशी प्रेस अधिनियम पारित होने के अगले दिन ही कोलकाता से बंगला में प्रकाशित अमृत बाजार पत्रिका ने अपने को 'अंग्रेजी दैनिक' पत्र बना दिया। इसके सम्पादक शिषिर कुमार घोष थे।
- 1878 के वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट में कहा गया है कि किसी भी मजिस्ट्रेट या पुलिस आयुक्त को किसी भी आपत्तीजनक मुद्रित उत्पाद को जब्त करने का अधिकार था।

4 ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का आर्थिक प्रभाव

प्रश्न: "प्रेस की स्वतन्त्रता तथा नियन्त्रण, इन दोनों सिद्धान्तों के बीच खींचतान का प्रभाव औपनिवेशिक शासकों के प्रेस के प्रति उनके रवैये में महसूस होता है।" विवेचना कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तर: प्रेस के प्रति औपनिवेशिक शासकों का रवैया मूलत: स्वतंत्रता के घोषित सिद्धांत (उदार ब्रिटिश परंपरा में निहित) और नियंत्रण की व्यावहारिक अनिवार्यता (भारत में साम्राज्यवादी सत्ता को बनाए रखने के लिए आवश्यक) के बीच निरंतर "रस्साकस्सी" से प्रभावित था।

स्वतंत्रता का सिद्धांत: एक उदार परंपरा

प्रेस की स्वतंत्रता की एक सीमित भावना अक्सर सामने आती थी, जो मुख्यत: ब्रिटिश उदार मूल्यों और रणनीतिक आवश्यकताओं में निहित थी:

- **प्रारंभिक उदारता (18वीं शताब्दी):** प्रारंभिक चरण में अंग्रेजी भाषा के अखबारों (जैसे हिकी का बंगाल गजट) के खिलाफ न्यूनतम हस्तक्षेप देखा गया क्योंकि वे मुख्य रूप से गपशप और यूरोपीय मामलों से संबंधित थे, और स्वदेशी आबादी या सरकारी प्राधिकार के लिए कोई खतरा पैदा नहीं करते थे।
- **सेंसरशिप का उन्मूलन (मेटकाफ):** सर चार्ल्स मेटकाफ के 1835 के अधिनियम ने प्रतिबंधात्मक प्रेस अध्यादेशों को निरस्त कर दिया, जिससे उन्हें "भारतीय प्रेस के मुक्तिदाता" की उपाधि मिली। यह कदम वैचारिक रूप से प्रेरित था, इस विश्वास पर आधारित था कि एक स्वतंत्र प्रेस एक प्रबुद्ध प्रशासन के लिए आवश्यक है और ब्रिटिश उदारवादी आदर्शों को प्रतिबिंबित करता है।
- **प्रेस का उपयोग:** औपनिवेशिक सरकार कभी-कभी शिक्षित अभिजात वर्ग के बीच जनमत का आकलन करने और अपनी नीतियों का प्रसार करने के लिए प्रेस (विशेषकर अंग्रेजी भाषा के समाचार पत्रों) का उपयोग करती थी।

नियंत्रण की अनिवार्यता: साम्राज्यवादी शक्ति को बनाए रखना

हालाँकि, प्रमुख और स्थायी रवैया नियंत्रण का था, जो राष्ट्रवाद को बढ़ावा देने और सरकार की आलोचना करने में प्रेस की बढ़ती भूमिका से प्रेरित था:

- **देशी भाषा का खतरा:** स्थानीय भाषा के प्रेस (क्षेत्रीय भाषाओं के समाचार पत्र) के उदय ने राजनीतिक विचारों की पहुँच आम जनता और शिक्षित गैर-अंग्रेजी भाषियों तक नाटकीय रूप से बढ़ा दी। इसे साम्राज्यवादी सुरक्षा के लिए एक सीधा खतरा माना गया।
- **1857 का विद्रोह:** इस घटना ने इस आधिकारिक धारणा को पुख्ता कर दिया कि स्वतंत्र प्रेस विद्रोह भड़का सकता है। इसके परिणामस्वरूप सीधे तौर पर प्रतिबंधात्मक गैगिंग एक्ट (1857) लागू हुआ, जिसने सरकार को मुद्रणालयों पर नियंत्रण के व्यापक अधिकार प्रदान किए।
- **लिटन और वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट (VPA), 1878:** लॉर्ड लिटन के प्रशासन ने आंतरिक प्रतिरोध और बाहरी चुनौतियों का सामना करते हुए, अत्यधिक भेदभावपूर्ण VPA पारित किया। यह अधिनियम नियंत्रण की अनिवार्यता का प्रत्यक्ष प्रकटीकरण था, क्योंकि इसने केवल वर्नाक्युलर प्रेस को लक्षित किया और सरकार को बिना किसी कानूनी सहायता के राजद्रोही माने जाने वाले अखबारों की संपत्ति जब्त करने की अनुमति दी।

निष्कर्ष

अंग्रेजों के अधीन प्रेस विनियमन का पूरा इतिहास इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने स्वतंत्रता तभी दी जब वह हानिरहित थी और जब भी साम्राज्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक हुआ, नियंत्रण लागू किया।

प्रश्न: "औपनिवेशिक शासन ने भारतीय बाजारों को इंग्लैंड निर्मित उत्पादों के लिए खोल दिया तथा स्वदेशी हस्तशिल्प उद्योगों के 'विउद्योगीकरण' अथवा विनाश का मार्ग प्रशस्त कर दिया।" (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तर: यह कथन भारत पर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विनाशकारी आर्थिक प्रभाव का सटीक सारांश प्रस्तुत करता है, जिसके दौरान विऔद्योगीकरण की प्रक्रिया देखी गई–स्वदेशी हस्तशिल्प उद्योगों का विनाश और साथ ही भारतीय बाजारों को ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं के लिए खोलना।

विऔद्योगीकरण की प्रक्रिया

भारत के प्रसिद्ध हस्तशिल्प क्षेत्र का विनाश आकस्मिक नहीं था, बल्कि जानबूझकर अपनाई गई औपनिवेशिक नीतियों का परिणाम था:

भेदभावपूर्ण शुल्कों का अधिरोपण:

- ब्रिटिश सरकार ने ब्रिटेन में आयातित भारतीय तैयार वस्तुओं (जैसे वस्त्र) पर भारी शुल्क और टैरिफ (70-80% तक) लगा दिए। इससे भारतीय वस्तुएँ अपने पारंपरिक यूरोपीय बाजारों में अत्यधिक महंगी हो गईं।

5 सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास

प्रश्नः उपयोगितावाद के मूल्यों ने कम्पनी प्रशासन को भारतीय समाज में सुधार के प्रयास के लिए प्रेरित किया। आलोचनात्मक जांच कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2024)

उत्तरः उपयोगितावाद के मूल्य, जो समग्र खुशी और कल्याण को अधिकतम करने पर केंद्रित थे, ने भारतीय समाज में सुधार के लिए कंपनी प्रशासन के प्रयासों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया, विशेष रूप से कानून, सामाजिक प्रथाओं और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में।

उपयोगितावाद के मूल सिद्धांत

- जेरेमी बेंथम और जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे विचारकों द्वारा समर्थित उपयोगितावाद ने ऐसे कार्यों की वकालत की जो "अधिकतम लोगों के लिए अधिकतम लाभ" उत्पन्न करते हैं।
- इसका मतलब था कि नीतियों और कानूनों का मूल्यांकन पूरे समाज को लाभ पहुंचाने की उनकी क्षमता के आधार पर किया जाना, न कि केवल पारंपरिक रीति-रिवाजों या धार्मिक मान्यताओं को बनाए रखना।

कंपनी प्रशासन के सुधार प्रयास

- **कानूनी सुधारः** उपयोगितावादी सिद्धांतों के कारण कानूनों को संहिताबद्ध किया गया, जिसका उद्देश्य अधिक तर्कसंगत और न्यायसंगत कानूनी प्रणाली बनाना था।
- **सामाजिक सुधारः** उपयोगितावादी विचारों से प्रभावित कंपनी के प्रशासन ने सती जैसी प्रथाओं को समाप्त करने के लिए कदम उठाए, कन्या भ्रूण हत्या पर रोक लगाई, विधवा पुनर्विवाह को वैध बनाया, महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने और बाल विवाह जैसे मुद्दों का समाधान करने का प्रयास किया।
- **शिक्षाः** उपयोगितावाद ने आधुनिक शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करने को बढ़ावा दिया, जिसका उद्देश्य अधिक कुशल और प्रबुद्ध कार्यबल तैयार करना था, जो समाज की समग्र प्रगति में योगदान दे सके।

उपयोगितावादी प्रभाव के उदाहरण

- **सती प्रथा का उन्मूलनः** सती प्रथा, जिसमें विधवाओं को अपने पति की चिता पर आत्मदाह करने के लिए मजबूर किया जाता था, को एक क्रूर और बर्बर प्रथा के रूप में देखा जाता था, जो व्यापक पीड़ा का कारण बनती थी। उपयोगितावादी सुधारकों ने तर्क दिया कि इसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह अधिकतम खुशी और कल्याण के सिद्धांत के खिलाफ था।
- **विधवा पुनर्विवाहः** उपयोगितावादी विचारों से प्रभावित कंपनी प्रशासन ने विधवा पुनर्विवाह को वैधानिक बना दिया, जिससे महिलाओं को अपने पति की मृत्यु के बाद पुनर्विवाह करने की अनुमति मिल गई।
- **शिक्षा सुधारः** उपयोगितावादी सुधारकों ने अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों की स्थापना और वैज्ञानिक तथा धर्मनिरपेक्ष शिक्षा को बढ़ावा देने की वकालत की, उनका मानना था कि इससे अधिक प्रगति और ज्ञानोदय होगा।

यद्यपि उपयोगितावादी सिद्धांतों से प्रेरित कंपनी के सुधार प्रयासों का भारतीय समाज पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा, फिर भी उनके कार्यान्वयन में निहित जटिलताओं और विरोधाभासों को स्वीकार करना महत्वपूर्ण है।

प्रश्नः 19वीं सदी के दौरान, सामाजिक सुधार की कार्यसूची (एजेंडे) को धीरे-धीरे पुनरुत्थानवाद द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। आलोचनात्मक जांच कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2024)

उत्तरः 19वीं सदी की शुरुआत में, सामाजिक सुधार आंदोलन का उद्देश्य सामाजिक बुराइयों को मिटाना और समानता हासिल करना था। लेकिन धीरे-धीरे यह पुनरुत्थानवाद की ओर बढ़ गया, जिसमें पारंपरिक धार्मिक प्रथाओं और मूल्यों के पुनरुद्धार पर जोर दिया गया, साथ ही अक्सर भारतीय पहचान और संस्कृति पर भी ध्यान दिया गया।

- **प्रारंभिक सामाजिक सुधार आंदोलनः** 19वीं शताब्दी में भारत में सामाजिक सुधार आंदोलनों का उदय हुआ, जो जाति व्यवस्था, अस्पृश्यता, बाल विवाह, सती और महिलाओं की अधीनता जैसे मुद्दों को संबोधित करने की इच्छा से प्रेरित थे।
- **सुधारवादी आंदोलनः** ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज और अलीगढ़ आंदोलन जैसे इन आंदोलनों ने मौजूदा सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देकर और शिक्षा, तर्क और सामाजिक समानता को बढ़ावा देकर समाज को आधुनिक बनाने का प्रयास किया।
- **पुनरुत्थानवाद का उदयः** जैसे-जैसे सदी आगे बढ़ी, एक विपरीत प्रवृत्ति उभरी, आर्य समाज और देवबंद आंदोलन जैसे आंदोलनों ने पारंपरिक धार्मिक प्रथाओं और मूल्यों के पुनरुद्धार पर जोर दिया। पुनरुत्थानवादी आंदोलनों ने अक्सर प्राचीन ग्रंथों और परंपराओं से प्रेरणा लेते हुए पश्चिमी प्रभाव के सामने भारतीय सांस्कृतिक और धार्मिक पहचान को मजबूत करने की कोशिश की।

सामाजिक सुधार से पुनरुत्थानवाद की ओर बदलाव 19वीं सदी के भारत में सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक ताकतों की जटिल अंतर्क्रिया को दर्शाता है, साथ ही आधुनिक भारतीय पहचान को परिभाषित करने और आकार देने के लिए चल रहे संघर्ष को भी दर्शाता है।

6 बंगाल एवं अन्य क्षेत्रों में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलन

प्रश्नः "सांस्कृतिक पुनरुत्थान और आधुनिकीकरण के बीच तनाव ने 19वीं सदी के भारत में सामाजिक-धार्मिक सुधार आन्दोलनों की दिशा को आकार दिया।" विवेचना कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः 19वीं सदी के भारत में सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों की दिशा मूलतः सांस्कृतिक पुनरुत्थानवाद और आधुनिकीकरण के बीच के तनावों से प्रभावित थी। ये दो विरोधी, फिर भी अक्सर एक-दूसरे से जुड़े हुए, दृष्टिकोण लगभग हर प्रमुख सुधारवादी समाज के लक्ष्यों, विधियों और परिणामों को परिभाषित करते थे।

मूल तनाव

यह तनाव इस बात से उपजा कि भारतीय बुद्धिजीवियों ने पश्चिमी शिक्षा और औपनिवेशिक आलोचना पर किस प्रकार प्रतिक्रिया व्यक्त की:

- **आधुनिकीकरण (सुधारवादी):** पश्चिमी तर्कवाद, उदारवाद और विज्ञान पर आधारित मौजूदा रीति-रिवाजों (जैसे सती प्रथा, मूर्तिपूजा, जातिवाद) को सीधे चुनौती देकर हिंदू समाज में आमूल-चूल परिवर्तन की वकालत की। उन्होंने स्वीकार किया कि आधुनिक पश्चिमी विचार इन पहलुओं में श्रेष्ठ था और समाज को इसके अनुकूल बनाने का प्रयास किया।
- **सांस्कृतिक पुनरुत्थानवाद (पुनरुत्थानवादी/रूढ़िवादी):** इस औपनिवेशिक धारणा को खारिज किया कि भारतीय संस्कृति स्वाभाविक रूप से दोषपूर्ण है। उन्होंने प्राचीन हिंदू धर्मग्रंथों (वेदों, उपनिषदों) के प्रमाण का हवाला देकर सुधार की मांग की, यह दावा करते हुए कि समाज की बुराइयाँ बाद में जोड़ी गई हैं जिन्हें दूर करने की आवश्यकता है। उनका आदर्श वाक्य था "स्वर्ण युग की ओर वापसी।"

प्रमुख आंदोलनों में प्रकटीकरण

यह द्वंद्व (dichotomy) प्रमुख सुधार संगठनों की जांच करने पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है:

आंदोलन	दृष्टिकोण	तर्क और प्रमुख कार्य
ब्रह्म समाज (राजा राममोहन राय/देबेंद्रनाथ टैगोर)	**आधुनिकीकरणवादी / सुधारवादी**	इसका उद्देश्य **एकेश्वरवाद** और **तर्कसंगत पूजा** को अपनाकर हिंदू धर्म को शुद्ध करना था; तर्क पर आधारित सामाजिक सुधारों का समर्थन किया। पुराणों और अनुष्ठानों को सीधे चुनौती दी।
आर्य समाज (दयानंद सरस्वती)	पुनरुत्थानवादी/सुधारवादी	**"वेदों की ओर लौटो"** का आह्वान किया। सामाजिक रूप से प्रगतिशील (जाति-विरोधी, महिला शिक्षा के पक्षधर) होने के बावजूद, इसकी पद्धति वैदिक युग की कथित शुद्धता को **पुनर्जीवित** करना था, जिसने बाद के हिंदू ग्रंथों के अधिकार को अस्वीकार कर दिया।
रामकृष्ण मिशन (विवेकानंद)	**आधुनिकीकरणवादी (आध्यात्मिक) और पुनरुत्थानवादी (सांस्कृतिक)**	आधुनिकीकरण (शिक्षा, समाज सेवा) की आवश्यकता को स्वीकार किया, लेकिन इसका मूल संदेश **हिंदू धर्म और वेदांत की आध्यात्मिक श्रेष्ठता** थी, जिसे इसने भारतीय गौरव के पुनरुत्थान के रूप में विश्व स्तर पर प्रस्तुत किया।
अलीगढ़ आंदोलन (सैयद अहमद खान)	**आधुनिकीकरणवादी (चयनात्मक)**	मुस्लिम समुदाय के लिए **आधुनिक, पश्चिमी वैज्ञानिक शिक्षा** पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि सामुदायिक पहचान को बनाए रखने के लिए कुछ धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं पर रूढ़िवादी रुख बनाए रखा।

प्रक्षेप पथ पर प्रभाव

इन दोनों दृष्टिकोणों के बीच तनाव ने आंदोलनों के अंतिम प्रक्षेप पथ को निर्धारित किया:

- **प्राधिकार के स्रोत की परिभाषाः** सुधारकों को परिवर्तन के स्रोत के रूप में धर्मग्रंथों (पुनरुत्थानवाद) और तर्क/विधान (आधुनिकीकरण) में से किसी एक को चुनना था। राममोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध लड़ने के लिए दोनों का ही प्रयोग किया, लेकिन आर्य समाज

7 ब्रिटिश शासन के प्रति भारत की अनुक्रिया

प्रश्नः 19वीं सदी के जनजातीय तथा कृषक विद्रोहों ने भारत में राष्ट्रवाद के उदय एवं विकास में किस प्रकार योगदान दिया? परीक्षण कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः 19वीं शताब्दी के आदिवासी और किसान विद्रोहों ने भारत में राष्ट्रवाद के उदय और विकास में एक महत्वपूर्ण, यद्यपि अधिकांशतः अप्रत्यक्ष और आधारभूत, योगदान दिया। हालाँकि ये विद्रोह मुख्यतः स्थानीय, औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध रक्षात्मक प्रतिक्रियाएँ थीं और इनमें कोई एकीकृत राष्ट्रीय विचारधारा नहीं थी, फिर भी इन्होंने सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियाँ और प्रतिरोध की चेतना का निर्माण किया जिसे बाद के राष्ट्रवादियों ने संगठित किया।

राष्ट्रवाद में आधारभूत योगदान

1. प्रतिरोध की परंपरा का निर्माण

- **संघर्ष की रूपरेखाः** इन विद्रोहों (जैसे संथाल हूल (1855), मुंडा उलगुलान (19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध), नील विद्रोह (1859-60), और दक्कन दंगे (1875) ने औपनिवेशिक सत्ता और उसके एजेंटों (साहूकारों, जमींदारों) के विरुद्ध अवज्ञा की एक महत्वपूर्ण परंपरा स्थापित की। उन्होंने प्रदर्शित किया कि किसान और आदिवासी समुदाय निरंतर जन प्रतिरोध संगठित करने में सक्षम थे।
- **भावी आंदोलनों को प्रेरित करनाः** विद्रोहियों की अदम्य दृढ़ता और बलिदान ने बाद के राष्ट्रवादी नेताओं और संगठनों के लिए प्रेरणा का एक शक्तिशाली स्रोत प्रदान किया, जिन्होंने अक्सर अपने राजनीतिक भाषणों में इन प्रारंभिक संघर्षों को उजागर करके लोगों में गर्व और साहस का संचार किया।

2. औपनिवेशिक शासन की प्रकृति को उजागर करना

- **व्यवस्था पर निशानाः** हालाँकि तात्कालिक लक्ष्य आमतौर पर स्थानीय एजेंट (जैसे जमींदार या महाजन) होते थे, विद्रोहों ने अनिवार्य रूप से इस तथ्य को उजागर किया कि ये स्थानीय उत्पीड़क व्यापक औपनिवेशिक प्रशासनिक और आर्थिक तंत्र के केवल पुर्जे थे। यह प्रतिरोध अंग्रेजों द्वारा लगाए गए भू-राजस्व, वन और कानूनी प्रणालियों के विरुद्ध था।
- **आर्थिक चेतना का विकासः** इन आंदोलनों ने ब्रिटिश नीतियों के विनाशकारी आर्थिक प्रभावों को उजागर किया–विशेष रूप से कृषि का व्यावसायीकरण, किसानों का उन्मूलन और भूमि अलगाव। इसने औपनिवेशिक शासन की बाद की राष्ट्रवादी आर्थिक आलोचना (धन के निष्कासन सिद्धांत) की नींव रखी।

3. अभिजात वर्ग के लिए सीखने का अनुभव प्रदान करना

- **जन क्षमता का प्रदर्शनः** प्रारंभिक राष्ट्रवादी नेता और शिक्षित शहरी अभिजात वर्ग, जो शुरू में संवैधानिक याचिकाओं तक ही सीमित थे, ने किसानों और आदिवासी समूहों में निहित जन लामबंदी की जबरदस्त क्षमता देखी।
- **राष्ट्रवादी कार्यक्रमों को आकार देनाः** नेताओं ने महसूस किया कि राजनीतिक लक्ष्यों को केवल जनता की भौतिक शिकायतों का समाधान करके ही प्राप्त किया जा सकता है। नील विद्रोह (जिसने अंग्रेजों को झुकने पर मजबूर कर दिया) की सफलता ने दिखाया कि केंद्रित आंदोलन कारगर साबित हुआ। यह अहसास महात्मा गांधी के लिए महत्वपूर्ण था, जिन्होंने अपने करियर की शुरुआत विशिष्ट किसान और मजदूर शिकायतों (चंपारण, खेड़ा, अहमदाबाद) को उठाकर की थी।

4. भौगोलिक एकीकरण (अप्रत्यक्ष रूप से)

- **साझा शिकायतेंः** भौगोलिक रूप से अलग होने के बावजूद, देश भर में विद्रोह समान शक्तियों द्वारा भड़काए गए थेः नए भूमि कानून, वन कानून, भारी कराधान और साहूकारों का दखल। उनकी पीड़ा की समानता, यद्यपि विकेंद्रीकृत थी, औपनिवेशिक शोषण के साझा अनुभव का संकेत देती थी, जिसे बाद में राष्ट्रवादियों ने एक ही राष्ट्रीय शत्रु के झंडे तले एकीकृत कर दिया।

योगदान की सीमाएँः

- **राष्ट्रीय एकता का अभावः** विद्रोह अत्यधिक स्थानीयकृत थे और अक्सर विशिष्ट स्थानीय समूहों (जैसे, दिकुओं के विरुद्ध संथालों) के विरुद्ध निर्देशित होते थे। एकीकृत भारतीय राष्ट्र या संपूर्ण ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध एक साझा रणनीति की कोई अवधारणा नहीं थी।
- **सामंती लक्ष्यः** कई विद्रोह पुनर्स्थापनात्मक या रक्षात्मक थे, जिनका उद्देश्य एक आदर्श पूर्व-औपनिवेशिक अतीत को पुनर्स्थापनात्मक करना या खोई हुई भूमि और अधिकारों को पुनः प्राप्त करना था, न कि एक आधुनिक राष्ट्र-राज्य की स्थापना करना।

निष्कर्षतः, 19वीं सदी के विद्रोहों ने जन प्रतिरोध की अग्नि-कुंडली का काम किया। उन्होंने सामाजिक-आर्थिक अंतर्वस्तु, अवज्ञा की तकनीक और जन कार्रवाई में वह विश्वास प्रदान किया जिसे बाद के राष्ट्रवादी आंदोलन ने सफलतापूर्वक अपनाया, समेकित किया और एक अखिल भारतीय राजनीतिक विचारधारा के रूप में विकसित किया।

8 भारतीय राष्ट्रवाद के जन्म के कारक

प्रश्न: भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना से सम्बन्धित 'सुरक्षा वाल्व सिद्धान्त' को हाल के शोधकर्ताओं द्वारा पूरी तरह से अस्वीकृत क्यों कर दिया गया है? विश्लेषण कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तर: 'सेफ्टी वाल्व थ्योरी', जो यह सुझाव देती है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (INC) की स्थापना मुख्यत: ए. ओ. ह्यूम द्वारा एक सोची-समझी ब्रिटिश रणनीति के तहत की गई थी ताकि बढ़ते भारतीय राजनीतिक असंतोष को एक सुरक्षित निकास प्रदान किया जा सके, हाल के ऐतिहासिक शोधों द्वारा पूरी तरह से खारिज कर दी गई है।

- आधुनिक विश्लेषण भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के गठन को एक साम्राज्यवादी षड्यंत्र के रूप में नहीं, बल्कि एक शिक्षित अभिजात वर्ग द्वारा स्वदेशी राजनीतिक गतिविधि की परिणति के रूप में देखता है।

सिद्धांत को खारिज करने के कारण

हालिया शोध ने साक्ष्यों और राष्ट्रवादी आंदोलन की एजेंसी के पुनर्मूल्यांकन के आधार पर सेफ्टी वाल्व थ्योरी के मूल सिद्धांतों को चुनौती दी है:

1. भारतीय एजेंसी और राजनीतिक जागृति पर जोर

- **राष्ट्रवादी जड़ें :** आधुनिक इतिहासकार, विशेष रूप से बिपिन चंद्र, तर्क देते हैं कि INC उस राजनीतिक प्रक्रिया का तार्किक चरमोत्कर्ष था जो 1870 और 1880 के दशक में कई क्षेत्रीय राजनीतिक संघों (जैसे, इंडियन एसोसिएशन, पूना सार्वजनिक सभा) के गठन के साथ शुरू हुई थी। इन समूहों ने पहले ही राष्ट्रीय राजनीतिक गतिविधि का ढाँचा स्थापित कर लिया था।
- **सचेत नेतृत्व:** दादाभाई नौरोजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और न्यायमूर्ति रानाडे जैसे नेता राजनीतिक रूप से अत्यधिक जागरूक थे और उन्हें संगठित होने के लिए किसी सेवानिवृत्त ब्रिटिश अधिकारी की सलाह की आवश्यकता नहीं थी। वे राष्ट्रीय एकीकरण और माँगों की अभिव्यक्ति के लिए कांग्रेस को एक आवश्यक राजनीतिक साधन मानते थे।
- **'वज्रपात' सिद्धांत:** इतिहासकारों का सुझाव है कि यदि कांग्रेस एक 'सुरक्षा वाल्व' थी, तो प्रारंभिक राष्ट्रवादियों ने अपनी सुरक्षा के लिए इसका इस्तेमाल 'बिजली के संवाहक' के रूप में किया। उन्होंने ह्यूम की स्थिति द्वारा प्रदान की गई आधिकारिक वैधता और सुरक्षा का लाभ उठाने के लिए उनकी भागीदारी को स्वेच्छा से स्वीकार किया, जिससे यह नवोदित आंदोलन औपनिवेशिक सरकार की प्रारंभिक शत्रुता से बच सका।

2. ठोस दस्तावेजी साक्ष्य का अभाव

- **लिटन रिपोर्ट का दावा:** यह सिद्धांत इस दावे पर बहुत अधिक निर्भर करता है कि लॉर्ड लिटन द्वारा प्राप्त गुप्त रिपोर्टों से ह्यूम को एक आसन्न, हिंसक राजनीतिक उथल-पुथल के बारे में सतर्क कर दिया गया था, जिसे ह्यूम ने कथित तौर पर देखा था।
- **मिथ्याकरण:** ऐतिहासिक जाँच में 1880 के दशक के आरंभ में ऐसे व्यापक, संगठित और आसन्न गुप्त क्रांतिकारी षड्यंत्रों के अस्तित्व का समर्थन करने वाला कोई सत्यापन योग्य दस्तावेजी प्रमाण नहीं मिला है जिसके लिए कांग्रेस की स्थापना जैसे चरम कदम की आवश्यकता पड़ी हो। इस सिद्धांत के प्रमाण मुख्यत: संदिग्ध और बाद में प्राप्त दूसरे लोगों के बयानों पर आधारित हैं।

3. प्रारंभिक कांग्रेस की माँगों की प्रकृति

- **गैर-क्रांतिकारी लक्ष्य:** कांग्रेस (1885-1905) की प्रारंभिक माँगें अधिकांशत: संवैधानिक और उदारवादी थीं (जैसे, भारतीयों के लिए उच्च प्रशासनिक पद, विधान परिषदों में सुधार, सैन्य व्यय में कमी)। ये माँगें शिक्षित मध्यम वर्ग की आकांक्षाओं को दर्शाती थीं, न कि एक क्रोधित, भूख से व्याकुल जनता की हताश, क्रांतिकारी माँगों को जो फूट पड़ने वाली थीं।
- **ब्रिटिश शत्रुता:** यदि कांग्रेस एक ब्रिटिश-प्रायोजित "सुरक्षा वाल्व" थी, तो उसे आधिकारिक समर्थन प्राप्त होना चाहिए था। इसके बजाय, ब्रिटिश रवैया तेजी से सौम्य प्रोत्साहन से खुले शत्रुता में बदल गया (जैसे, लॉर्ड डफरिन ने कांग्रेस को "सूक्ष्म अल्पसंख्यक" कहा)। इस त्वरित बदलाव से पता चलता है कि अंग्रेजों को एहसास हो गया था कि कांग्रेस एक नियंत्रित तंत्र नहीं, बल्कि एक वास्तविक, राष्ट्रवादी राजनीतिक संस्था बन रही थी।

निष्कर्ष

आधुनिक शोध ने इस कहानी को सफलतापूर्वक उलट दिया है। कांग्रेस की स्थापना का मूल्यांकन अब भारतीय राजनीतिक पहल और ऐतिहासिक आवश्यकता के परिणाम के रूप में किया जाता है, जिसने नए संगठन के अस्तित्व को सुनिश्चित करने और एक सम्मानजनक आधिकारिक मुखौटा प्रदान करने के लिए ए. ओ. ह्यूम जैसे इच्छुक लोगों का रणनीतिक रूप से उपयोग किया। इस प्रकार, 'सेफ्टी वाल्व थ्योरी' को एक सरलीकृत, साम्राज्यवादी दृष्टिकोण के रूप में खारिज कर दिया जाता है जो प्रारंभिक भारतीय राष्ट्रवादी नेतृत्व को एजेंसी और आत्म-चेतना से वंचित करता है।

9 गांधी का उदय

प्रश्नः "गाँधी का आगमन राष्ट्रीय आंदोलन का भारतीयकरण था।" 1917-1922 के मध्य हुए उनके प्रारंभिक आन्दोलनों के सन्दर्भ में विश्लेषण कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी का उदय, विशेष रूप से 1917 और 1922 के बीच उनके शुरुआती आंदोलनों के माध्यम से, स्पष्ट रूप से राष्ट्रीय आंदोलन के भारतीयकरण का प्रतीक था। इस परिवर्तन ने संघर्ष को पूर्ववर्ती उदारवादियों और उग्रवादियों के अभिजात्य, अंग्रेजी-शिक्षित और शहर-केंद्रित ढाँचे से दूर कर दिया, जिससे यह एक जन-आधारित, स्थानीय और सांस्कृतिक रूप से निहित आंदोलन बन गया।

1. जन-आंदोलन और आधार विस्तार

गांधी के शुरुआती आंदोलनों ने भारतीय समाज के विशाल, पहले अछूते वर्गों को सफलतापूर्वक राजनीतिक क्षेत्र में ला खड़ा किया:

- **चंपारण सत्याग्रह (1917):** यह आंदोलन नील की खेती की दमनकारी व्यवस्था के विरुद्ध हाशिए पर पड़े किसानों की दुर्दशा पर केंद्रित था। इसने ग्रामीण जनता को सीधे तौर पर शामिल किया, जो पहले की राष्ट्रवादी राजनीति से काफी हद तक अनुपस्थित थी।
- **अहमदाबाद मिल हड़ताल (1918):** यह आंदोलन औद्योगिक श्रमिकों के मुद्दों पर केंद्रित था, जिसमें भूख हड़ताल और मध्यस्थता के माध्यम से आंदोलन चलाया गया। इसने उभरते औद्योगिक सर्वहारा वर्ग को राष्ट्रीय संघर्ष में एकीकृत किया।
- **खेड़ा सत्याग्रह (1918):** इसमें मध्यम वर्ग के किसान (पाटीदार) फसल खराब होने पर कर में राहत की मांग कर रहे थे। इसने असहयोग की शक्ति को प्रदर्शित किया और स्थानीय कृषि संबंधी शिकायतों को राष्ट्रीय संघर्ष से जोड़ा।
- इन स्थानीय आंदोलनों का सम्मिलित प्रभाव राष्ट्रीय आंदोलन के लिए एक जनाधार का निर्माण था, जिसने इसे "वर्ग" आंदोलन से "जनता" आंदोलन में बदल दिया।

2. भारतीय सांस्कृतिक मुहावरों को अपनाना

गांधीजी ने जानबूझकर पश्चिमी राजनीतिक तरीकों को स्वदेशी सांस्कृतिक और धार्मिक प्रतीकों से बदल दिया, जिससे यह आंदोलन आम भारतीयों के लिए प्रासंगिक हो गया:

- **सत्याग्रह और अहिंसा:** यह मूल पद्धति एक मौलिक भारतीय अवधारणा थी, जो अहिंसा और सत्य-बल की परंपराओं में निहित थी, जो अधिकांश भारतीयों के लिए तुरंत सुलभ और नैतिक रूप से आकर्षक थी। इसने याचिकाओं, प्रस्तावों और छिटपुट हिंसा का स्थान ले लिया।
- **परिचित प्रतीकः** गांधीजी ने चरखा और खादी जैसे भारतीय जीवन के प्रतीकों का प्रयोग किया। चरखा आत्मनिर्भरता (स्वराज) और ब्रिटिश औद्योगिक वस्तुओं के विरोध का आर्थिक और राजनीतिक प्रतीक बन गया, जिसने एक साधारण शारीरिक गतिविधि को एक शक्तिशाली राजनीतिक संदेश में बदल दिया।
- **भाषा और वेशभूषाः** गांधीजी ने भारतीय वेशभूषा (धोती) का सबसे सरल रूप अपनाया, यूरोपीय पोशाक त्याग दी और राजनीतिक संवाद में स्थानीय भाषाओं का प्रयोग किया, जिससे नेतृत्व और जनता के बीच सांस्कृतिक अवरोध तुरंत टूट गया।

3. असहयोग और संरचनात्मक परिवर्तन

असहयोग आंदोलन (1920-1922) इस भारतीयकरण का चरमोत्कर्ष था, जिसने कांग्रेस पार्टी के भीतर परिवर्तन को संस्थागत रूप दियाः

- **कार्यक्रमात्मक भारतीयकरणः** इस कार्यक्रम में ब्रिटिश संस्थाओं (अदालतों, स्कूलों, विधानमंडलों) का बहिष्कार और साथ ही स्वदेशी विकल्पों (राष्ट्रीय स्कूलों, मध्यस्थता न्यायालयों) को बढ़ावा देना शामिल था। यह औपनिवेशिक ढाँचे का एक मौलिक खंडन था।
- **संवैधानिक पुनर्गठनः** नागपुर अधिवेशन (1920) में कांग्रेस के संविधान में आमूलचूल परिवर्तन किया गया। इसमें भाषाई आधार पर कांग्रेस के पुनर्गठन का प्रावधान किया गया और इसका लक्ष्य शांतिपूर्ण एवं वैध तरीकों से स्वराज की प्राप्ति निर्धारित किया गया।
- **वित्तीय आधारः** तिलक स्वराज कोष के संग्रह और लाखों प्राथमिक सदस्यों के नामांकन ने कांग्रेस को एक व्यापक वित्तीय

प्रश्नः "भारतीय जनमानस की जागृत राजनीतिक चेतना तथा अंग्रेजों के असम्मानजनक और कायरतापूर्ण अपमान ने असहयोग आंदोलन को जन्म दिया।" समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए। **(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2023)**

उत्तरः 1920 में महात्मा गांधी द्वारा शुरू किया गया असहयोग आंदोलन, भारत के स्वतंत्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण चरण था। यह कई कारकों के संयोजन से प्रेरित था, जिसमें राजनीतिक चेतना का जागरण और ब्रिटिश विरोध के तत्व शामिल थे।

असहयोग आन्दोलन के कारण

- ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों द्वारा भारत के आर्थिक शोषण ने पहले ही जनता को गरीब बना दिया था।

10 औपनिवेशिक भारत में संवैधानिक विकास

प्रश्नः "1892 के भारतीय परिषद् अधिनियम की महत्त्वपूर्ण विशेषता चुनाव का सिद्धान्त थी जिसे इसमें पेश किया गया था, हालाँकि इसमें 'चुनाव' शब्द का प्रयोग बहुत सावधानी से टाला गया था।" (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2025)

उत्तरः 1892 का भारतीय परिषद अधिनियम ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि इसने शाही विधान परिषद और प्रांतीय विधान परिषदों, दोनों के गैर-सरकारी सदस्यों के लिए प्रतिनिधित्व या चुनाव का सिद्धांत लागू किया, हालाँकि अधिनियम के मूल पाठ में "चुनाव" शब्द का प्रयोग जानबूझकर और सावधानीपूर्वक नहीं किया गया था।

निर्वाचन सिद्धांत का परिचयः

इस अधिनियम ने अप्रत्यक्ष नामांकन की प्रक्रिया के माध्यम से निर्वाचन सिद्धांत को सूक्ष्म रूप से लागू किया:

- **शाही विधान परिषदः** गैर-सरकारी सदस्यों को प्रांतीय विधान परिषदों और कलकत्ता चैंबर ऑफ कॉमर्स की सिफारिश के आधार पर गवर्नर-जनरल द्वारा नामित किया जाना था।
- **प्रांतीय विधान परिषदः** गैर-सरकारी सीटें जिला बोर्डों, नगर पालिकाओं, विश्वविद्यालयों और चैंबर्स ऑफ कॉमर्स जैसे स्थानीय निकायों की सिफारिश पर किए गए नामांकन द्वारा भरी जाती थीं।

'चुनाव' शब्द का प्रयोग क्यों नहीं किया गया

ब्रिटिश सरकार, जो पूर्ण शाही सत्ता की धारणा के तहत काम कर रही थी, ने जानबूझकर "चुनाव" शब्द का प्रयोग नहीं किया ताकि यह दिखावा बना रहे कि सारा अधिकार सीधे राजमुकुट और उसके प्रतिनिधियों से आता है:

- **शाही सत्ता का संरक्षणः** 'चुनाव' शब्द का स्पष्ट रूप से प्रयोग करने से भारतीय जनता के अपने प्रतिनिधि चुनने के राजनीतिक अधिकार को मान्यता मिल जाती, जिसे अंग्रेज अभी तक स्वीकार करने को तैयार नहीं थे।
- **नामांकन का दिखावाः** चयनात्मक मताधिकार के आधार पर प्रक्रिया को "सिफारिश" या "नामांकन" के रूप में संरचित करके, अधिनियम ने औपचारिक रूप से गवर्नर-जनरल के अंतिम नियुक्ति करने के अधिकार को संरक्षित किया, जिससे आधिकारिक नियंत्रण का सिद्धांत बना रहा।
- **सीमित मताधिकारः** यह प्रणाली एक बहुत ही संकीर्ण निर्वाचन क्षेत्र (धनी जमींदार, व्यापारी और स्नातक) तक सीमित थी और अप्रत्यक्ष थी, जिससे यह सुनिश्चित होता था कि प्रतिनिधि आम तौर पर वफादार अभिजात वर्ग हों, न कि लोकप्रिय आंदोलनकारी।
- यह अधिनियम प्रतिनिधि सरकार के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की मांगों के प्रति एक अनिच्छुक रियायत थी, जो भारत में प्रतिनिधि प्रणाली की औपचारिक शुरूआत की दिशा में पहला संवैधानिक कदम था।

प्रश्नः भारत सरकार अधिनियम 1935 के संघीय प्रावधान राजाओं के कठोर रूख से असफल हो गए। आलोचनात्मक जांच कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2024)

उत्तरः भारत सरकार अधिनियम 1935 के संघीय प्रावधानों का उद्देश्य एक अखिल भारतीय संघ का निर्माण करना था, जो अंततः विफल हो गया, क्योंकि रियासतें, जो इसकी सफलता के लिए महत्वपूर्ण थीं, ने इसमें शामिल होने से इनकार कर दिया, इस प्रकार संघीय ढांचा अव्यवहार्य हो गया।

अधिनियम की संघीय संरचनाः

- भारत सरकार अधिनियम 1935 में भारत के लिए एक संघीय ढांचे का प्रस्ताव रखा गया, जिसमें ब्रिटिश भारतीय प्रांत और रियासतें दोनों शामिल थीं।

रियासतों की भूमिकाः

- इस अधिनियम में एक ऐसे संघ की परिकल्पना की गई थी जिसमें रियासतें शामिल होंगी, लेकिन उनकी भागीदारी अनिवार्य नहीं होगी।

रियासतों की हठधर्मिताः

- रियासतें, जिनमें से कई अपनी स्वायत्तता छोड़ने के लिए अनिच्छुक थीं, ने अंततः प्रस्तावित संघ में शामिल होने से इनकार कर दिया, जिससे अधिनियम की संघीय आकांक्षाएं विफल हो गईं।
- रियासतों की भागीदारी की कमी के कारण अखिल भारतीय संघ कभी अस्तित्व में नहीं आया और अधिनियम के संघीय प्रावधान लागू नहीं हो सके।

संघ की स्थापना करने में असफलता के बावजूद, शक्तियों के विभाजन और प्रांतीय स्वायत्तता सहित अधिनियम के प्रावधानों ने भावी भारतीय संविधान के लिए आधार तैयार किया।

प्रश्नः ''क्रिप्स मिशन निरन्तर मुसीबतों से ग्रस्त रहा, तथा अन्ततः विफल हो गया।'' (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2019)

उत्तरः भारत के राजनीतिक गतिरोध को दूर करने के उद्देश्य से ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने ब्रिटिश सांसद स्टैफर्ड क्रिप्स के नेतृत्व